क्ष चाहनेवाला गीता सम्बन्धी ज्ञान का अ-
भ्यास नहीं किया वह बालकों करके उपहास
को पाता है जिन्होंने रातदिन गीताका मनन
किया है वह मनुष्य नहीं है साक्षात् उनको
देवताही जानना उचित है, गीतामें अठारह
अध्याय हैं वह अध्याय सीढ़ीरूप हैं जिनके
द्वारा मनुष्य परमब्रह्मको प्राप्त होता है, जि-
सने गीता शास्त्र का पठन पाठन नहीं किया

वह ग्रामशूकर समान है जिस पुरुष ने गीता
ज्ञान को नहीं पाया उस मनुष्य का शरीर,
ज्ञान, कुलीनता को वारम्बार धिक्कार है हे
शौनक ! जिसने गीता का मर्म भेदी ज्ञान
नहीं प्राप्त किया उस पुरुषका सम्पूर्ण क्रिया
कर्म आदि समस्त उत्तम उपाय सभी नि-
ष्फल हैं इसलिये इस पुनीत गीता शास्त्रका
पठन पाठन मनन उत्तम पवित्र स्थान में

सावधान एकाग्रचित्त से करना चाहिए जि
ससे श्रीकृष्णचन्द्र भगवान् प्रसन्न होते हैं
और उसे अन्त में मोक्ष प्राप्त होता है। जो
नित्य गीता का पाठ और श्रवण करता है
उस पुरुषने मानो सभी यज्ञादि कर्म कर लि-
ये जिसने गीता का अर्थ सुनकर दूसरों को
भलीभांति सुनाया है उन्होंने मानो परम-
पद प्राप्त कर लिया गीता पुस्तक के पूजन

करने वाले मनुष्य के समस्त दानादि कर्म होजाते हैं और उसे किसी भांति के कष्ट नहीं मिलते हैं। जिस गृहमें गीता का नित्य पूजन होता है उस स्थान में तीनों प्रकार (दैहिक-दैविक-भौतिक) ताप और रोगों करके पीडा भी नहीं होती है। हे शौनक ! जहां पर गीता शास्त्रका नित्य विवाद हुआ करता है वहां पर श्रीभगवान् की अखण्ड आपावनी

भक्ति उत्पन्न होती है। गीता के पाठ करने वालेको ब्रह्म हत्यादि पाप नहीं लगते हैं। यदि किसी कारण वस अनायास किसी भांति का प्रायश्चित्त किसी पुरुष को लगभी गया हो तो वह गीता शास्त्र के पाठ से तत्क्षण नाश होजाता है। जिस पुरुष का अन्तःकरण गीता में ही रमता हो सोई क्रियावान् और वही पंडित है जहां पर गीता का पाठ व मनन

नित्य हुआ करता है वहा पर समस्त देवता और श्रीगोपाल कृष्णजी स्वयं अपने ग्वाल बालों सहित पार्षदोंको संगलिये साक्षात् विराजमान रहते हैं। श्रीगीता में ही श्रीकृष्णचंद्र भगवान ने अर्जुन प्रति कहा है कि हे अर्जुन! जहांपर गीताका नित्य विचार होता है वहां पर हम निश्चय ही बास करते हैं। हे पार्थ! देखो गीता मेरा हृदय, गीता मेरा उत्तम

सार. गीता मेरा अति अग्रज्ञान और अक्षय
ज्ञान. गीता मेरा उत्तम स्थान है जिस ज्ञान
को हम अवलम्बन करके तीनों लोकोंका पा
लन करते हैं। हे अर्जुन ! इस पुनीत गीताके
'गीता १ गंगा २ गायत्री ३ सीता ४ सत्या ५ सर-
स्वती ६ ब्रह्मविद्या ७ ब्रह्मवल्ली ८ त्रिसंध्या ९
मुक्तगेहनी १० अर्धमात्रा ११ चिदानन्दा १२
भवघ्नी १३ भयनाशिनी १४ वेदत्रयी १५ प-

री१६ अनन्ता १७ तत्वार्थज्ञानमंजरी १८'
उक्त अठारह नाम हैं इन नामों को जो पुरु-
ष नित्य मनस्थिर कर जपता रहै वह अति
शीघ्रही ज्ञान सिद्धी को पाकर अन्त समय
मोक्षको प्राप्त होता है । पुरुष को उचित है
कि जिस भांति होवे अपनी सामर्थ्य अनुकू-
ल आधे श्लोक से लेकर जितना निरन्तर
पाठ करसके पूर्ण गीता पर्यन्त उतनाही सं-

क्ति भावयुक्त नित्य पाठ करता है। केवल इ
तनेही साधनसे उसपुरुष को अनेक मनोर्थ
और परम गति मिलती है । यदि भाग्यवश
गीता का पाठ सुनते हुये या गीताका अर्थ
सुनते हुये शरीर त्यागन करे तो वह अवश्य
ही मुक्त होजाता हैं। हे शौनक ! सम्पूर्ण पु
स्तक गीता की यदि मरण समय पास होतो
उसके माहात्म्य का कहनाही क्या है परन्तु

एक अध्याय या गीता शब्द उच्चारण करते
हुये अगर मृत्यु को प्राप्त होजावै तो वहभी
मुक्त हो जाता है और कर्म गीता शब्द का
उच्चारण करते हुये जो मनुष्य करते हैं वह
अक्षय पुण्यके देनेवाले अवश्यही होतेहैं जो
पुरुष गीता पुस्तकको नित्य निज शरीरपरधा
रणाकिये रहतेहैं उसके अनेक विघ्न रूप दा
रुण उपद्रव नाश होतेहैं । जो गोदान सम

य सुवर्ण युक्त गीता पुस्तक का दान करते हैं वह पुरुष समस्त यज्ञादि कर्म और बडे २ उत्कट दानादिक करचुका उसको फिर जन्म नहीं लेना पडता इससे उचित है कि जहां तक होसके जितनेही गीता पुस्तक का दान प्राणी करता है उसका उतना ही अक्षय सुख और अन्तमें मोक्ष मिलता है । गीतामें ऊंच नीचका विचार नहीं है जो चाहे जिस वर्णके स्त्री

पुरुष इस पुनीत गीता का अभ्यास और मनन पाठ आदि कर सकते हैं कि जिसके द्वारा जनकादिकोंने परमगति का साधन किया इस हेतु हे शौनक ! गीताका अभ्यास परमगतिका देनेवाला है इसका मनन परमोत्तम ध्यान है इस गीता का पाठ परम गति देनेवाला है इस कारण यत्न पूर्वक निरंतर कुछ न कुछ जितना ही हो सके नित्य गीताका अभ्यास करना

चाहिये। गीताके पाठ करने बाद महात्म्यका पाठ अवश्य करे नहींतो गीता का पाठ व्यर्थ हो जाता है इस कारण माहात्म्यसहित गीता का पाठ करना योग्य है और वही कल्याणप्र-द है जो श्रोता माहात्म्य सुनकर गीताका पाठसु नैगे वह अवश्य मोक्षपदको पावैगे। इस भां ति श्रीकृष्णने अर्जुन प्रति गीताका माहात्म्य वर्णन किया उसीको हे शौनक! हमने आप-

से यहां कहा है ।

इति श्री वाराह पुराणे सूत शौनक संवादे श्रीकृष्ण प्रोक्तं श्रीमद्भगवद्गीता माहात्म्यं सम्पूर्णम्।

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

❀ ॐनमो भगवते वासुदेवाय नमः ❀

श्रीमद्भगवद्गीता के आरम्भ का हेतु वर्णन—

श्री महाराज पाण्डु और धृतराष्ट्र यह दोनों बैमात्र भाई थे राजा पांडु के दो स्त्री (कुन्ती माद्री) थीं; रानी कुन्ती के युधिष्टिर १

अर्जुन २ भीम ३ यह तीन पुत्र और रानी मा-
द्री के नकुल १ सहदेव २ दो पुत्र उत्पन्न हुये
जो पांच पाण्डव नाम से जगत में प्रसिद्ध हु
ये। धृतराष्ट्र के दुर्योधनादि एक सौ पुत्र थे
परन्तु धृतराष्ट्र के जन्मान्ध होने के कारण
बड़ा पुत्र दुर्योधन ही राज कार्य करता था।
परस्पर वैमनस्य फैलनेसे राज्यहेतु युधिष्ठि
रादि पांचों पाण्डवोंसे और दुर्योधनादि सौ

भाइयोंसे परस्पर लोमहर्षण संग्राम कुरुक्षे त्रमें ठना, दोनों ओर के वीरगण हस्थिनापु रसे समरांगणहेतु चले तो राजा धृतराष्ट्र ने भी कहाकि क्या मैं भी युद्धका कौतुहल दे-खने चलूं ? उसी समय श्री वेदव्यास जी ने कहाकि हे महाराज ! आप तो नेत्रहीन हैं सं ग्राम स्थलमें जाकर आप क्या कर सक्ते हैं। यह उत्तर श्री वेदव्यासजी से धृतराष्ट्र सुनके

र बोले कि हे परमपूज्य ! आपका कहना ब
हुत ठीक है हम नेत्रहीन हैं परन्तु संग्राम में
जाकर वहां के कर्तव्यको और समाचारों को
तो सुना करेंगे। यह सुन व्यासजीने कहाकि
हे राजन् ! आपका यह सारथी मेरा शिष्य
संजय है इसको हम वरदेते हैं। जो कुछ महा
भारत के युद्ध की लीलारूप बातें होगी व
ह यह सभी परिपूर्ण आपको श्रवण करावेगा

इतना सुनतेही संजय हाथ जोड़कर श्री वेद
व्यास जीसेकहने लगा कि हे भगवन् ! यह
हस्थिनापुरी है और संग्राम तो कुरुक्षेत्र में
होगा इतनी दूरके समाचार मैं किस भांति
जानूंगा और श्रीमान् को क्या सुनाऊंगा ! त
व व्यासजीने वर दिया कि हे संजय ! आपअ
ति चतुर हैं मैं आपको वरदेताहूं कि आपकी
दिव्यदृष्टि होजायगी और बुद्धिनेत्रों द्वारा

आपको यहीं पर सब दिखाई देगा। इस वर के पातेही संजय जी दिव्य दृष्टि होगये और बुद्धि भी तीव्रहोकर श्रीवेदव्यास की कृपासे समस्त महाभारथ का वृत्तान्त बर्णन करने लगे। सात अक्षौहिणी सेना युक्त पाण्डव लोग और ग्यारह अक्षौणी सेना युक्त दुर्योधनादि बड़े बड़े वीरों को संग लिये युद्धहेतु कुरुक्षेत्र में जाकर एकत्र हुये।

श्रीमद्भगवद्गीता भाषा प्रारम्भः।

धृतराष्ट्रोवाच-हे संजय ! धर्मक्षेत्र (धर्म का क्षेत्र) में मेरे पुत्र और पाण्डवके पुत्र युद्ध हेतु-एकत्र हुये क्या करते हैं सो वर्णन करिये ? 'यहा पर धृतराष्ट्र ने जो कुरुक्षेत्र का विशेषण धर्मक्षेत्र कहा इसका अभिप्राय है कि युधिष्ठिर धर्मात्मा है शायद युद्ध में जीव हिंसा का विचार करके शायद युद्ध न

करे तो हमारे पुत्रों का प्राण बच जायगा श्रौ
र राज्यश्री भी बनी रहेगी। या हमारे ही पु-
त्रों को यह बुद्धि उत्पन्न होजाय कि हमने
युधिष्ठिर का राज्य छलसे लिया है सो फेरदें
तो भी उनके प्राण बच सकते हैं। कुरुक्षेत्र धं
र्मक्षेत्र है वहां पर पापात्मा के भी जानेसे ध
र्म में बुद्धि हो जाती है शायद दुर्योधन ही
मनमें शोच विचार करके परस्पर मेल करे

और निःप्रयास राज्य जो मिला है उसको वा
पस कर देवे। अभिप्राय यह है कि धृतराष्ट्र
ने अपने वचन में कहा है कि हमारे पुत्र औ
र पांडु के पुत्र इससे यह सिद्ध होता है कि
धृतराष्ट्र के मनमें निश्चयही वैर भावथा, सं
जय से इस अभिप्राय से पूछा कि किन किन
ने उत्साह पूर्वक प्रथम हथियार चलाये और
कौन कौन ने विना उत्साह के युद्ध किया

आदि अनेक विचार पूर्वक यह धृतराष्ट्र का वचन है ' श्री संजय धृतराष्ट्र के यह वचन सुनकर कहा कि हे राजन्! पांडवों की व्यूह रचना को देखकर राजा दुर्योधन मनमें विचार करके गुरुदेव द्रोणाचार्य के निकट जाय कहने लगे कि हे आचार्य ! द्रुपद के पुत्र धृष्टद्युम्न जो आपका अति बुद्धिमान् शिष्य है उसने किस चतुरता से पांडवों की सेना का व्यूह

रचना किया है हे गुरुदेव ! पाडवों की सेना में
बड़ा धनुषधारी भीमसेन अर्जुन राजा युयु-
धान राजा विराट राजा द्रुपद महारथी धृष्टके
तु चेकितान अतिबलवान काशिराज पुरुजि
त कुंतिभोज शैव्य युधामन्यु अतिबलशा-
ली उत्तमौजा सुभद्राका पुत्र अभिमन्यु औ
र द्रौपदी के पुत्र सभी महारथी हैं। इतना क-
हते ही दुर्योधन के मनमें विचार आया कि

कहीं द्रोणाचार्य कहने न लगें कि यदि आप
इन शूरवीरों से डरते हैं तो मत युद्ध करिये
यह सोचकर कहने लगे कि हे आचार्य! हमने
तो पाण्डवों की सेना के वीर वर्णन किये परन्तु
मेरी ओर के महामहारथी वीरों को भी जान
लीजिये । आप भीष्मपितामह कर्ण कृपा-
चार्य अश्वत्थामा विकर्ण सोमदत्त भूरिश्रवा
आदि आदि अनेक शूरवीर मेरे हेतु प्राण के

त्यागने वाले अनेक भांतिकी शस्त्र विद्या के
जानने वाले और ग्यारह अक्षौहिणी युक्त हैं
फिर आपकी सेना भीष्म पितामह करके र-
क्षित है और पांडवों की सेना भीमसेन करके
रक्षित है यह कहने का यह अभिप्राय है कि
हमारी सेना अतिदृढ और अति बलवान है।
इतनी वार्ता द्रोणाचार्य से करके दुर्योधनने
सेना को आज्ञा दिया कि आपलोग सभी मि

लकर भीष्म पितामह की रक्षा करना और जितने मार्ग बाणादि प्रहार के है उसकी रक्षा करते रहना इतना कहते ही भीष्म पितामह जी ने दुर्योधन के प्रसन्नता हेतु बड़ेही वेगसे सिंहकी भांति घोर गर्जना करके उच्चस्वरसे शंख को बजाया इस शब्द को सुनतेही सेना के और मुख्य लोगोंने शंख नगारा ढोल नर सिंहा आदि अनेक भांति के बाजे बजाये।

इस शब्द को सुनकर पांडवों की सेनानें बा-
जा बजाना शुरू किया प्रथम जिस रथ पर म-
हारथी अर्जुन विराज मान हैं वह समस्त सुव
र्ण का बना हुआ सफेद स्वच्छ जिसमें घोड़े
लगे हैं मेघ की गर्जना तुल्य रथके पहियों की
आवाज है ऐसे उत्तम रथ पर अर्जुन बैठे हैं
जिस रथके सारथी त्रैलोक्य के रक्षक भूभार
हरण करने वाले श्रीकृष्णचन्द्र घोड़ों की

बाग और चाबुक लिये बिराजमान हैं ऐसे उत्तम रथ पर से श्रीकृष्णचन्द्र ने अपना पांचजन्य शंख और अर्जुन ने देवदत्त नामक शंख बजाया भीमसेन ने पौंड्रक नामक शंख युधिष्ठिर ने अनन्त विजय नामक शंख नकुल ने सुघोष नामक शंख सहदेव ने मणिपुष्प नामक शंख बजाये इसके बाद सभी शूरवीरों ने अपने अपने शंख पृथक पृथक बजायें।

इन शंखों कें शब्द कों सुनतें ही दुर्योधन की सेंना कें वीरों का हृदय भय दुर्योधन कें फट गया । इधर अर्जुन ने कहा कि हें श्रीकृष्ण ! मेंरा रथ दोनों सेनाओं के मध्य में खडा करो हम यह देखेंगे कि कहां कहां के राजा लोग युद्ध करने के लिये प्राण धन को त्याग करके आये हुये हैं । संजयने धृतराष्ट्र सें कहा कि हे राजन् ! अर्जुन कें बचन सुनकर श्रीकृष्ण

चन्द्र ने दोनों सेनाओं के मध्य में रथको ले जाकर खड़ा कर दिया और कहा कि हे पार्थ! अब तू इन योधाओं को देख इतना कहते ही अर्जुन ने चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर देखा कि पितर लोग दादा गुरू मामा भाई लोग पुत्र पोता मित्र आदि सभी इष्ट मित्रों को देख-कर जो हाथियार बांधे यथा योग्य लड़ने के लिये उद्यत हैं यह कौतूहल देखकर अर्जुन

बोले कि हे कृष्ण! इन सब कुटुम्बियों को यु-
द्ध के लिये उद्यत हमने देखा परन्तु हे कृष्ण
मेरे अंग ढीले हुये जाते हैं मुख मेरा सूखा जा
ता है समस्त देह कांप रही है शरीर के सभी
रोवें खड़े हुये हैं गांडीव धनुष मेरे हाथ से गि-
रा जाता है देह की खाल खिंची जाती है म-
न मेरा घबड़ा रहा है हे केशव! सभी शकुन उ
लटे दिखाई पड़ते हैं मैं तो अपने इष्टमित्र

और सम्बन्धियों को मार कर अपना कल्या-
ण नहीं देखता हूँ हे कृष्ण ! हम ऐसी विजय
नहीं चाहते और न राज्य के सुख को ही चा-
हता हूँ हे गोविन्द ! इस भांति के जीने से औ
र राज्य के सुख भोगने से क्या लाभ होगा
जिनके लिये हम राज्य और सुख चाहते हैं
वही सब प्राणों से हाथ धोकर मेरे सामने ल-
ड़ने को उद्यत हैं हे मधुसूदन ! यदि यह लोग

मुझे मार भी डाले तो भी मेरी इच्छा इनलो
गों पर शस्त्र फेंकने की नहीं है यदि मैंने इन
से युद्ध किया और मुझे तीनों लोक का भी
राज्य मिल जाय तो उससे क्या अर्थ मेरा हो
गा इस लिये इस तुच्छ राज्य के हेतु हे जना-
र्दन ! इन धृतराष्ट्र के पुत्रों के मारने से मेरी
क्या भलाई होगी और इन अताताइयों के
मारने से मुझे उलटा पापही की आशा है इ-

श्रीलक्ष्मी जी कहने लगीं कि हे नाथ ! आप
तो त्रैलोक्य के प्रभु हैं क्या आपको भी नि-
द्रा और आलस्य व्यापती है तब नारायण
जी ने मुसकराकर कहा कि दुर्लभे ! मुझे नि-
द्रा और आलस्य कुछभी नहीं व्यापता म
सदैव गीता शास्त्र का जो गूढ तत्व है उसका
मनन किया करता हूं । जिसके मनन से मनु-
ष्य का क्लेश और दुःख आदि अनेक भांति

के कष्ट नहीं व्यापते हैं जिस भांति मेरे मेरे चौबिस अवतार हैं उसी भांति गीता शा- स्त्र भी मेरा अवतार जानो। गीता के अठार ह अध्याय मेरे शरीर के अंग हैं। हे सुशोभने तुम जानती होगी कि मेरे पैर के दाबने से श्री नारायण जी सुख में आकर आनन्द रूपी स मुद्र में मग्न हैं सो बात नहीं है मैं तो सदैव गी ता शास्त्र का मनन किया करता हूं उसी में

मेरा चित्त लगा रहता है और उसी मननको आनन्द मानता हूं। तब लक्ष्मी जी ने कहा कि हे प्राणनाथ! उस गीता शास्त्र को जान कर कोई प्राणी कृतार्थ भी हुआ है सो मुझप र दया करके कहिये?। तब श्रीनारायण ने कहा कि समस्त गीता का माहात्म्य तो बड़ाभा री है हम तुमसे गीता के प्रथम अध्याय का माहात्म्य कहते हैं सो सुनो हे प्रिये! एक सु-

शर्मा नामक अतिदुष्टबुद्धि, पापी आत्मा
के न जाननेवाला निन्दित कर्म करनेवाला
ब्राह्मण के वंश में उत्पन्न था जिसने कभी
ध्यान जप होम और अतिथियोंकी सेवा न-
हीं किया केवल बिषयमें रात्रि दिन मन लगा
ये हुये रहता था नित्य खेती का काम करै प-
त्ता बेंचकर उसकी जीविका थी मदिरा मांस
आदिका भोजन करनें वाला निन्दित आ-

स कारण धृतराष्ट्र के पुत्र अपने भाइयों को मार कर मुझे क्या सुख मिलेगा, इन लोगों की बुद्धि लोभवश नष्ट होगई है तथापि कुलक्षय करना यह महाघोर पाप है, कुल के क्षय हो जाने पर सनातन धर्म भी नष्ट हो जाता है यह आप भली भांति जानते हैं देखिये कुलके नाश होजाने पर कुल धर्म नाश होता है और अधर्म फैल जाता है अधर्म के फै-

लेने से वर्णशंकर संतान उत्पन्न होती है उ-
नके द्वारा पितर लोग नरक में ही जाते हैं ।
यह बड़ेही पछतावे की बात है कि हम ऐसे घो
र महापातक के करने का उपाय करते हैं और
तुच्छ सुख के लालच में पड़कर अपने कुटु-
म्बियों के बध में प्रवृत्त हुये हैं। यदि यह धृत
राष्ट्र के पुत्र शस्त्र से मुझ अशस्त्री को मार
भी डाले तो भी मैं बदला लेना उचित नहीं स

मरता हूँ। संजयने धृतराष्ट्र के प्रति कहा कि हे राजन्! इस भांति अर्जुन श्री कृष्ण के प्रति कह कर हाथ से धनुवा धर दिया और रथ में पीछे हटकर खिन्न मन (उदास) चुप बैठ गया।

इति श्रीमद्भगवद्गीता सुपनिषध सुब्रह्मविधयां योगशास्त्रे श्रीकृष्ण अर्जुन सम्वादे अर्जुन विषाद योगोनाम प्रथमोध्यायः १

॥ श्रीगीताके प्रथम अध्यायका माहात्म्य ॥

एक समय पार्वतीजी श्रीमहादेवजी से बोलीं कि हे भगवन् ! आपसे हमने अनेक प्रकार के धर्म सुने अब आप मुझपर दया करके हे देव ! गीता के प्रथम अध्याय का माहात्म्य वर्णन करिये ? तब श्रीमहादेवजी अति प्रसन्न होकर कहने लगे कि हे प्रिये ! एक समय श्री नारायणजी के चरण कमलों को दाबती हुई

चरणासे बहुत समय बिताकर एक दिन पत्ता
लेने की कामनासे वह मूढ एक ऋषिके बाग
में गया वहां पर कालरूपी सांप ने उसे डस
लिया तो वह मर कर अनेक प्रकार के कष्ट
नर्क में भोग कर मृत्यु लोक में बैल की योनि
में उत्पन्न हुआ और किसी लंगड़े मनुष्यने
उस बैलको खरीद लिया और उसपर बोझ
लादने लगा किसी दिन ज्यादा बोझ होनेके

कारण पृथ्वी पर वह बैल गिरपड़ा और फेन मुँह से बहने लगी आंखें निकल आईं मार्गमें बहुतसे मनुष्य खड़े होकर उसको देखने लगे और एक पुण्यात्मा ने अपना कुछ पुण्य उसे दिया और भी कई मनुष्य अपना अपना थोड़ा थोड़ा पुण्य देते भये इतने में वहां एक वेश्या आई और उसने भी अपने पुण्य में से कुछ दिया उसी क्षण वह बैल मरगया तो य-

मराज के दूत उस बैलको यमराज के नि
कट पकड कर लेगये । यमराज उस बैल को
देख वेश्या के दिये पुराय को उसके पास जा
नकर उसे छोड़ दिया तो वह पृथ्वी तल में फि
र उस वेश्या के पुराय के प्रभाव से ब्राह्मण के
घर सुक्र्मा का जन्म लेता भया और उसे पूर्व
जन्म का पूर्ण हाल का ज्ञान था इस लिये वह
पूर्वही का समस्त वृत्तान्त स्मर्ण कर करके प

छुताया करे। एक दिन ऋषियों के बालक गी
ता के प्रथम अध्याय का पाठ कर रहे थे उस
पाठ को शुआ ने सुना उससे उसकी आत्मा
पवित्र हो गई। आकस्मात् एक दिन उस शु
आ को पिंजरा सहित कोई चुरा ले गया और
ले जाकर किसी के हाथ बेंच दिया वहां पर उस
की मृत्यु हो गई तो वह पवित्र आत्मा शुआ ने
मुक्ति को पाया। हे प्रिये लक्ष्मी! यह गीता के

प्रथम अध्याय का माहात्म्य है उसी के मनन- न में मेरा चित्त सदैव लगा रहता है इस वृत्त को महादेव ने पार्वती जी को सुनाया है । इस गीता के प्रथम अध्याय के महात्म्य को जो नित्य पढ़ता है सुनता है स्मर्ण करता है अ- भ्यास करता है वह घोर समुद्र रूपी संसार को पार करके अन्त में मोक्ष को पाता है॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीश्वर सम्बादे गीतायां प्रथम अध्याय महात्म्यं समाप्तम्

अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

श्रीसंजयने कहा कि हे राजन् ! आसुओंसे भरे हुये नेत्र दया से परिपूर्ण हृदय अपने कुटुम्बियों को युद्ध में खड़े हुये देख विचार करते हुये गद्गद् स्वर से परिपूर्ण अर्जुन को देख कर श्रीकृष्णजी बोले कि हे अर्जुन ! यह कायरता ऐसे समय में कहाँ से तुमको आई अरे !!! यह कायरता तो धर्म से रहित है और अ

यश को देने वाली है। हे पार्थ ! इस तुच्छ का यरता को जल्द छोड़ दीजिये ऐसे समय में मनको छोटा करना ठीक नहीं है आपतो शत्रुओं को जलाने वाले हैं कि स्वयं आपही मनको जला रहे हैं। अर्जुनने कहा कि हम कायरता से युद्ध प्रति नहीं हटते यह हमारे पूज्य भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य को युद्ध में हम कैसे मारेंगे हे अरिसूदन ! गुरू आदिक म

हात्माजनों को संग्राम में बध करके ऐश्वर्य
की इच्छा करना अच्छा नहीं है परन्तु भिक्षा
मांग कर भोग भोगना उत्तम है हम यह नहीं
जानते कि संग्राम के अन्त में किसकी जय हो
गी ऐसे अनिश्चित कार्य में अपने मित्र बांधं
व गुरुओं को मारना अयोग्य है यह धृतराष्ट्र
के पुत्र हमारे सामने लड़ने के लिये खड़े हैं इन
को मारकर हम कैसे जीवैंगे यह गलानी और

अपने कुलका नाश देखकर मेरें मनके शूर-
ता आदि गुण घसे जाते हैं हे कृपालु! कृपा
करके ऐसे संकट युक्त समय में मेरा कल्याण
होवै वैसा उपदेश मुझे कीजिये मैं आपका
शिष्य आपकी शरणागतहूं। हे कृष्ण हम
इस अवसर को जानते हुये भी कोई उपाय न
हीं देखते कि समस्त पृथ्वी का अकंटक राज्य
अथ वा देवतों काभी राज्य पाकर मेरा शोक

जो मन इन्द्रियों को जला रहा है उसको दूर कर सके। संजय ने धृतराष्ट्र प्रति कहा कि हे राजन् ! इस भांति अर्जुन ने श्रीकृष्ण प्रति कहकर कहा कि हम न लड़ैंगे यह कह कर चुप होगये। तब श्रीकृष्णजी मुसकराकर दोनों सेनाओं के मध्य स्थित अर्जुन प्रति बोले कि हे अर्जुन ! तुम अपने को पण्डित मानते हुये जो मुझसे कहा सो पंडितजन मरे व जी

ते हुये लोगों का शोंच नहीं करते देखो क्या हम प्रथम नहीं थे? या तुम न थे? कि यह राजा लोग न थे? अवस्य थे और इसके बाद क्या हम सब लोग न होंगे? अर्थात् अवस्य ही जन्म लेंगे इसकारण यह शोंच विचार करना ठीक नहीं है जिस भांति जन्म लेकर शरीर में बाल युवा वृद्धावस्था आती है उसी भां-ति शरीर भी बदला करते हैं इससे बुद्धिमा

न जन घबड़ाते नहीं हैं हे कौन्तेय ! इन्द्रियों
की वृत्ति और विषयों के सम्बन्ध से सरदी ग-
र्मी और सुख दुःख आदि होते हैं और उनका
सम्बन्ध स्थिर नहीं रहता उसी भांति यह स-
भी अनित्य है इसको तुम भली भांति जानो
जिस धीर पुरुष को यह द्वन्द सुख दुःखादि न
हीं सताते वही पुरुष श्रेष्ठ और मुक्ति के यो-
ग्य है । जो पदार्थ नाशमान है वह ठहरता न

हीं है और जो नित्यहै उसका नाश नहींहोता इनका जानने वालाही तत्वदर्शी कहाता है हे अर्जुन ! सर्वव्यपक आत्माको अविनाशी जानो जिसका नाश कोई भी नहीं कर सक्ता है । यह शरीर अनित्य है और जीवात्मा नि- त्य कहा गया है । हे भारत ! इससे आप सं- ग्राम करियें जीवात्मा तो नित्य है इसका ना श तो होता ही नहीं है और यह शरीर अनि-

गीता भाषा पु:

त्य है जो समय पाकर वस्त्रादि की भांति त्या
गना ही पड़ता है। इस जीवात्मा को जो मा
रने वाला अथवा मरा हुआ मानता है यह दो
नो ही अज्ञानी है यह आत्मा न तो मरे और
न मारती है न कभी जन्म लेवै और न मृत्यु
को प्राप्त होवै यह सदैव एक रूप रहती है प्रा
चीन गलित शरीर होनेसे उसको त्याग नवी
न शरीर में स्थित होती है जो कोई इस आ-

त्मा को अविनाशी सदा एकाकार जन्म म
रणा से रहित जानता है हे अर्जुन ! वह किस
को मारता है और कौन मरता है जैसेः-पुरुष
प्राचीन फटे और मलीन गलित वस्त्रों को त्या
गकर नये पहिन लेता है उसी भांति यह आ-
त्मा गलित शरीर को त्याग कर नवीन दूसरे
शरीर में जाकर स्थित हो जाती है । इस जी
वात्मा को शस्त्र नहीं काटते न इसको आग

जलाती है और न इसको पानी भिगाता है न इसको वायु सुखाती है यह आत्मा नित्य है स्थाणु है अचल है और सनातन है। यह आत्मा चिन्तासे रहित निर्विकार कहाती है। इस लिये तुमको इस विषय में शोंच करना योग्य नहीं है। यदि यह मानलो कि यह आत्मा उत्पन्न होती है और सदा मरती है तब भी हे महाबाहो तुमको शोंच करना सुशोभि

त नहीं है कारण कि जिसका जन्म होता है
वह अवश्यही मरता है और जोमरता है उसे
अवश्यही जन्म लेना पड़ता है हे अर्जुन ! इ
समें किसी भांति का विचार करना अयोग्य है
इस आत्माको कोई आश्चर्य युक्त और कोई
आश्चर्यकी भांति देखता और सुनता है इत
ने परभी इस आत्मामें किसीकी बुद्धि निश्चि
त नहीं होती है हे भारत ! देह धारण करने वा

ला जीवात्मा सभी सरीरोंमें अविनाशी और
मारने योग्य नहीं है तो सब प्राणियों का शो-
च करना भी व्यर्थ है । हे अर्जुन क्षत्री वृत्ति
को धारण किये तुमको युद्ध में कांपना अ
योग्य है धर्मयुद्ध में लड़ना इससे कल्याण
दायक कर्म क्षत्रिय के लिये दूसरा नहीं है ।
जो बिना इच्छा युद्ध आपड़े और संग्राम में
लड़जावे तो उसकेलिये स्वर्ग द्वार खुला हु-

आ है इस कारण अति भाग्यसे ऐसी लड़ाई क्षत्रियों को प्राप्त होती है । संग्राम में सन्मुख स्थित चाहै गुरू बालक वृद्ध ब्राह्मण शास्त्रज्ञ अतातताई वेदान्ती जो हो उससे संग्राम करना और उसे मारना परमधर्म है यदि तुम

३३

इस संग्रामको चित्त दुर्बलताके वस छोड़दोगे तो तुम्हारा धर्म और यश नाश होकर पापी हो जाओगे और संसार में सभी लोग तुमको

कादर कहेंगे साथही अयश तुम्हारा फैलेगा पुरुष को अयश मिलना मरने के तुल्य है व-ल्की मरजानाही श्रेय है। जो लोग तुमको महान जानते थे वह तुमको संग्राम में उदास देखकर युद्धसे डरे हुये तुच्छ मानेंगे और संसार में तुम्हारी अकीर्ति होगी तो इससे बढकर संसार में क्या दुःख होगा। हे पार्थ ! यदि संग्राम में तुम मारे भी गये तो स्वर्ग मिलेगा य

दि जीत गये तो संसार में यशयुक्त पृथ्वी के रा-
जा होवोगे हे कौन्तेय ! इस निन्दित कायर-
ता को छोड़कर संग्राममें चैतन्य हो जाइये ।
सुख दुःख हानि लाभ जय पराजयको सम
भाव जानकर लड़ाई में चित्तको लगाओ इ
ससे तुमको पाप न होगा । हे अर्जुन यह सां
ख्य योग का मत हमने वर्णन किया अब बु-
द्धियोगको सुनो जिस करके कर्म बन्धनसे

श्लो० २

६५

छूटजाओगे इस कर्म योगका आरम्भ निष्फ
ल नहीं होता और पाप भी नहीं होता है हे कु-
रुनन्दन ! परमेश्वर की ही भक्ति से हमारी मु
क्तिहोगी यही निश्चय मनमें ठान लीजिये।
जो लोग मीठी मीठी बाते कहकर ईश्वर की
भक्तिसे रहित काम करते हैं वह पण्डित नहीं
हैं। सकाम कर्म करने वाले स्वर्ग को ही परम
गति जानते हैं कि जिससे जन्म मरण उनका

अवश्य होता है जिनकी बुद्धि सुख और ऐश्व
र्य में बँधी हुई है जिनका मन गृहस्थाश्रममें
कुटुम्बियों द्वारा सुन्दर सुन्दर बचन सुनकर
मोहित हो रहा है उनकी बुद्धि कभी समाधि-
स्थ नहीं होती । इस कारण हे अर्जुन ! वेदोंमें
तीन (सत-रज-तम) गुण कहे गये हैं इनको
त्यागकर द्वन्द रहित होकर आत्मवान होजा
ओ । छोटे छोटे जल समूहसे जिस भांति कार्य

सम्पादन होता है वह कार्य एक बड़े तालाव
से होजाता है जितने अर्थ सब वेदों में कहे
गये हैं उनको ब्रह्मज्ञानी जानते हैं। तुमको तो
केवल कर्म करने में ही अधिकार है फलको
इच्छा करनेमें तुमारा अधिकार नहीं है इस
से फलकी इच्छा न करो और योगमें अटल
चित्त होकर सब कर्म करो कार्य पूरा होगा या
न होगा इसको समानजानो इसी समान जा

नने को योग कहते हैं। मनुष्य को उचित है
कि निष्काम कर्म को करे और सकाम कर्म तु
च्छ है बुद्धिकी सहायतासे निष्काम ईश्वर
की शरण में जाओ फलकी चाहनावाले दरि
द्री होते हैं। ज्ञानी पुरुष इसी जन्म में पाप
पुण्य त्याग करदेते हैं इस कारण कर्मयोग
करिये। शुद्ध बुद्धिवाले ज्ञानी पुरुष क-
र्मके फलों को त्याग करके जन्म मरण के

अ० २
४६

बन्धनसे छूटकर निश्चय मुक्ति पद पाते हैं
जिस समय तुमारी बुद्धि मोहरूपी कीचड़
से बाहर निकलेगी तब तुमने जो सुना है औ
र जो सुना चाहते हौ उसमें वैराग्य उत्पन्न हो
जायगा वेदके कहे हुये फलोंमें जो तुमारी
बुद्धि एकाग्र होकर समाधिमें दृढरूपसे स्थि
र होगी तब तुम योगको प्राप्त होगे । इतना
सुनकर अर्जुन बोले कि हे केशव ! जिसकी बु

द्धि समाधि में अचल है वह स्थिर बुद्धि वा
ला किस भाँति बोलता है समाधि कैसी है वह
लोगों के साथ वार्ता किस भाँति करता है और
वह किस भाँति चलता बैठता है उसको मुझे
समझाइये । यह प्रश्न अर्जुनका सुनकर श्री
कृष्ण चन्द्र बोले कि हे अर्जुन ! सम्पूर्ण काम
नायें जो मनमें भरी हुई हैं उनको छोड़देवै
और आपही अपनी आत्मामें तृप्त रहे उसको

अ०२

७१

स्थितप्रज्ञ कहते हैं जिसका मन दुःख में घब-
ड़ाता नहीं है और सुखकी इच्छा जाती रहती
है भय प्रीति क्रोधसे रहित है उसीको स्थिर बु
द्धि कहते हैं जो सब पदार्थों में स्नेह नहीं रख
ता भले और बुरे पदार्थके मिलनेसे प्रसन्न औ
र दुःखी नहीं होती उसीकी बुद्धि उत्तम है।
जिस समय योगाभ्यासी इन्द्रियोंके सुखसे
बिरक्त हो जावै "कछुये की भाँति" तब उस-

की बुद्धि प्रशंसनीय है । जो पुरुष निराहार रहते हैं उनकी बुद्धि इन्द्रियों के स्वादसे घट जाती है परन्तु इच्छा स्वाद की नहीं जाती और आत्माके दर्शनसे वांछा भी दूर हो जाती है । बड़ेबड़े बुद्धिमान लोग जो मुक्तिके उद्योगमें लगे रहते हैं उनकोभी यह इन्द्रियां बहकाने वाली और घबड़ाने वाली हैं उनके भी मनको हठसे यह खींचलेती हैं इस कार-

रखा इन्द्रियोंको भली भाँति रोककर मुझमें मन लगाकर इन्द्रियोंको बशमें रक्खे उसी की बुद्धि उत्तम है। आदमी को विषयों के ध्यानसे उनमें प्रीति होती है प्रीतसे कामना बढ़ती है और कामनासे क्रोध उत्पन्न होता है क्रोधसे व्याकुलता व्याकुलता से मतिभ्रम मतिभ्रम से बुद्धिकानाश बुद्धिकेनाश से पुरुषका नाश हो जाता है। जिस पुरुष की

इन्द्रियां प्रीति और बैरसेरहित होकर भोग
करती हैं और मन अपने बसमें है वह सदैव
प्रशन्न चित्त रहता है इस प्रशान्नतासे सम-
स्त दुःखोंका नाशकर उसकी ही बुद्धि ब्रह्म
ज्ञानमें अचल हो जाती है। जिसकी इन्द्रि-
यां बशमें न होवैं उसकी बुद्धि नहीं है न उस
को ध्यान होता है जिसका ध्यान स्थिर नहीं
है उसको शान्ति नहीं है और शान्ति न पा-

अ०२

६५

प्त होनेसे उसको सुख कहां है कहीं भी उसे सुख नहीं मिलता है। इन्द्रियां अपने अपने विषयों में दौड़ती हुई जिसने अपने स्थिर मनसे न रोक लिया उसका मन सदैव 'पानीमें नौकाकी भांति' डावां डोल रहता है। इस कारण हे महाबाहो! जिसकी सब इन्द्रियां बस में होवैं और अपने अपने विषयों से निवृत्त होवैं उसीकी बुद्धि परिपूर्ण है। जो सब

लोगों की रात्रि है उसमें इन्द्रियों को रोकने
कने वाला जागता है जिस समय समस्त प्रा-
णी जागते हैं वह मुनि लोगों की दृष्टि में रा-
त्रि है। जिस प्रकार समुद्र में सब तरह से न-
दियों का जल आता है पर समुद्र अपनी म-
र्यादा छोड़कर बढ़ता नहीं है उसी भांति मुनी
लोगों को सब सांसारिक व्यवहार और इ-
न्द्रियों के विषय प्रारब्ध बस आ जाते हैं पर-

७७

न्तु उनका मन उसमें आसक्त नहीं होता है।
इस प्रकार आचरण करने वाले ही मनुष्य
को शान्ति प्राप्त होती है। जो पुरुष सब काम
नाओं को त्याग करके अहंकार और ममता
को भी त्याग कर बिना प्रयोजन (बे परवाह)
रहता है वह मुक्तिको अवश्य पाता है और व
ह ब्रह्मज्ञान की स्थिति प्राप्तकरके फिर अज्ञा
न में नहीं फँसता उसको निर्वाण मुक्ति मिल

ती है इसीको हे अर्जुन! ज्ञान निष्ठा कहते हैं ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषदसु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन संवादे सांख्ययोगो नाम द्वितियोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथ दूसरे अध्यायकामहात्म्य ।

श्रीनारायण ने लक्ष्मी प्रति कहा कि हे प्रिये ! दक्षिणादिशा में एक पुरन्दर नामक पुर था उसमें वेदके पढ़ने वाला एक देवशर्मा नामक बसता था जो शान्त चित्त शास्त्रों में कहे हुये आचरण नित्य किया करता था पर-

न्तु एकान्तकी शान्ति उसको न प्राप्त हुई त
ब वह अनेक साधुओंकी सेवा करनेलगा अ-
कस्मात् एक विद्वान् शान्त चित्त ब्रह्मचारी

ब्रह्मज्ञान में तत्पर आगए उनको देखकर
देवशर्मा ने उनका आतिथि सत्कार किया
और प्रणाम करके कहा कि मुझपर दया क
रके नारायण जीके जानने का उपदेश करि-
ये कि जिससे मेरा कल्याण होवे और मुझे

अन्त में मोक्ष पद मिले। तब ब्रह्मचारि ने कहा कि गीता जी के दूसरे अध्याय का पाठ सुनाता हूं कि जिससे तुमारा कल्याण होगा। तब देवशर्मा ने पूछा कि गीता के दूसरे अध्याय को सुनकर पहिले भी कोई मुक्त हुआ है?। ब्रह्मचारी ने कहा कि इस विषय में हम पुरातन एक कथा बर्णन करते हैं उसको सुनो गोदावरी नदी के किनारे प्रतिष्ठा नाम पुरमें

दुर्दम नामक ब्राह्मण था उसकी मृत्यु हुई तो
नरक के अनेक कष्ट भोगकर दुर्वृत ब्राह्मण
के घर में जन्म लेकर दुराधर्षा कन्या के सा-
थ विवाह हुआ परन्तु वह स्त्री एक कामी चा
ण्डाल से साथ रमण करने लगी और चांडा
ल से ही एक कन्या उत्पन्न किया वही स्त्री
वृद्धावस्था में डाकिनी होगई एक समय एक
वृद्ध व्याघ्र रोगसे पीडित रास्तें मे पड़ा था उ-

सको इस डाकिनीने खा लिया । वह व्याघ्र नरक में जाकर अनेक भाँति का कष्ट सहन कर फिर भी घोर जंगल में व्याघ्र ही हुआ और वह डाकिनी मरकर नरक में जाय अनेक तरह के कष्ट भोगकर बकरी हुई । एक दिन उधर से वही व्याघ्र आता था और इधर से बकरियों के भुराड जाते थे व्याघ्र को देखकर सब बकरी तो भागीं पर वह डाकिनि रूप बकरी

खड़ी होगई और वह व्याघ्र उसके पास आक
र खड़ा होगया और परस्पर वार्ता करने लगे
बकरी ने कहा कि हे व्याघ्र मुझे खा जाइये त
ब व्याघ्र ने कहा कि मुझे भूख और प्यास तो
अवश्य है परन्तु तेरे खानेकी मेरी इच्छा न-
ही होती यह वार्ता करके वह दोनों ब्रह्मचा-
री ने कहा कि मेरे पास इसका कारण पूंछने
आये तब हमारे भी समझ में यह बार्ता न आ

ई तब एक वानर (बाँन्दर) बूढे से पूंछा तब उ-
स वानर ने कहा कि हे बकरी के पालन कर-
ने वाले ! इस समय मैं और एक पुरातन इति
हास कहता हूँ सो सुनिये ! यहाँ से थोड़ी दू-
र पर एक शिवलिंग ब्रह्मा करके स्थापित है
वहाँ पर सुकर्मा नामक एक ब्राह्मण तप हे-
तु रहते थे वहाँ पर एक अतिथि दूसरे तपस्वी
आगये उन दोनों ब्राह्मणों में परस्पर वार्ता हो

अ०२

८५

ती रही मुनिने प्रसन्न होकर पत्थर के ऊपर गीता के दूसरे अध्याय को लिख दिया और ब्राह्मण को आज्ञा दिया कि आप इस गीता के दूसरे अध्याय को पढ़ा करिये यह कह कर मुनि तो अन्तर्ध्यान होगये और देव शर्मा उस गीता के दूसरे अध्याय को पढ़ने लगे औ र अन्तमें मोक्षको पाया यह वार्ता वानर से सुनकर वह व्याघ्र और बकरी दोनों जाकर

पत्थर पर लिखे गीता के दूसरे अध्याय को प
ढ़ते भये वह भी परस्पर के पूर्व वृत्तान्त को
जान गये और अन्त में मोक्ष को पाया उसी
भाँति देवशर्मा ने भी गीता के दूसरे अध्याय
को पढ़कर श्रेष्ठ मुक्ति पद को लाभ किया।
श्रीनारायणने कहा कि हे लक्ष्मी ! यह हम-
नें तुमसे गीता के दूसरे अध्याय के महात्म्य
को वर्णन किया कि जिसको पढ़कर व सुन-

अ०२

८७

कर मनुष्य मोक्ष पावेंगे।

इति श्रीपद्मपुराणे सतीश्वर संवादे उत्तरखण्डे गीतायां
द्वितीयोऽध्याय महात्म्यं समाप्तः ॥ २ ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः।

श्रीकृष्णाचन्द्रजी से उक्त कर्मयोग सुनकर अर्जुन बोले कि हे जनार्दन ! जो आपके मत में कर्मसे ज्ञानबुद्धि उत्तम है तो हे केशव ! मुझे इस घोर कर्म में किस हेतु लगने को कहते हैं इस लिये इन मिली जुली बातों को कह

कर मेरी मति क्यों भ्रम में डालते हैं एक बात ठीक करके कहिये। श्रीकृष्णजी ने कहा कि हे अनघ! अर्जुन! इस संसार में दो प्रकार की निष्ठा है सो हमने प्रथमही कहा है कि सांख्यशास्त्र वालों की तो ज्ञानयोग से और कर्मयोग वालों की कर्म करने से जिनके लि-ये जैसा कर्म नियत है वही करना श्रेष्ठ है औ-र कर्म न करने से कर्म करना अति उत्तम है

इस लिये हे अर्जुन ! विना कर्म किये तुमा-
रा निर्वाह नहीं है इस लिये तुम नियत क-
र्म को करो । सिद्धान्त इसका यह है कि हे
कौंतेय ! जो कुछ कर्म करो उसे ईश्वर को अ
र्पण करो और फल की इच्छा न करो देखो
ब्रह्मा ने निज प्रजा को यज्ञ समेत उत्पन्न कि
या और कहा कि इस यज्ञ द्वारा तुमारी वृद्धि
होगी और यह तुमारी कामना देने का काम

धेनु है इसी द्वारा देवता गण प्रसन्न होकर मनोर्थ सिद्ध करेंगे जिससे तुम परम कल्याण को प्राप्त होगे । यज्ञ से तृप्त और प्रसन्न हुये देवता लोग तुमको मन वांछित भोग और सुख देंगे समस्त पदार्थ देवतों के हैं उसको जो देवताओं के अर्पण नहीं करता वह मनुष्य चोर है। यज्ञका बचा हुआ अन्न को जो लोग भोजन करते हैं वह घोर पापों से छूट जा

ते हैं जो लोग अपनेही लिये भोजनादि बना कर खालेते हैं वह पुरुष अपने पापों को खाते हैं अन्नसे जगत की सृष्टि होती है और मेघ से अन्नादिक पदार्थ उत्पन्न होते हैं यज्ञ करने से मेघबरसते हैं और यज्ञ कर्मसे उत्पन्न होता है वेद से कर्म होते हैं परमात्मा से वेद रचेगये हैं इस कारण सर्वव्यापक ब्रह्म नित्य यज्ञमें रहता है इसको जो नहीं मानता वह

अ०३

भार रूप पृथ्वी में व्यर्थ उत्पन्न हुआ उसे जा
निये। जिस पुरुष की चेष्टा आत्माही से प्री-
ति आत्मा ही में आसक्ती और आत्माही में
तृप्ती होवे उसको फिर कुछभी करने को बा-
की नहीं उसे पाप पुण्य कुछभी नहीं होता इ-
स कारण हे अर्जुन! तुम करने योग्य कर्म
को अवश्य करो बिना कर्म किये मनुष्य
की मुक्ति नहीं होती है देखो जनकादि राजा

६२

ओं ने कर्म केही द्वारा मुक्तिको पाया । यह प
रम्परा से चली आई है कि बड़े बड़े लोग का-
म करते हैं हे अर्जुन ! मुझे तीनों लोकों में को
ई भी पद पदार्थ मिलने से बाकी नहीं है तिस
पर भी हम कर्म करते हैं यदि हम कर्म न कर
ते तो और लोग भी कर्म न करेंगे और लोग कु
मार्ग में प्रीति करेंगे जिसमें अनेक विघ्न उत्प
न्न होकर हम प्रजाके नाशक कहावेंगे । इस

लिये कर्म सब को करना उचित है परन्तु नि-
न्दित बुद्धि वाले कुमार्गरूप कर्म में लगे र-
रहते हैं इन और बुद्धिमान जन सुमार्गरूप
कर्म में लगे रहते हैं इन दोनों को चाहिये कि
अहंकार को छोड़कर कर्म करें और सदैव यह
मन में स्थित लिये रहे कि इस कर्म को करके
यह फल हम नहीं चाहते और कर्म ईश्वर का
है और ईश्वर ही करता है सुमार्गी तो उत्तम

२५

गतिको प्राप्त होवेगाही परन्तु कुमार्गी भी धीरे धीरे उसकी बुद्धि स्थिर होकर वह भी उत्तम गतिका अधिकारी होजावेगा। इन्द्रियों के सुखकी तरफ यह अवश्य ध्यान रक्खे कि हम नहीं कुछ करते यह इन्द्रियों का व्यापारही है परन्तु उसे कुमार्ग से रोकने के लिये बुद्धि द्वारा यत्न अवश्य करता रहे। हे अर्जुन इस अज्ञानताको छोड़कर युद्ध करो परन्तु यह

श्र०३

अभिमान नजदीक न आने पावे कि हम इ-
नको मारते हैं हम बड़े बली हैं हम इनको ल-
ड़ाई में जीत लेंगे यह सुख दुःख की भावना
छोड़दो। इस मत का जो आदर करते हैं वही
बुद्धिमान गिने जाते हैं और जो इसका अना-
दर करते हैं वह संसार में निन्दित और दुष्टा-
त्मा कहलाते हैं। हे अर्जुन! इन्द्रियों के व्या-
पार के सुख दुःखादि की तरफ ध्यान न दी-

६७

जिये। अपना अधूरा भी धर्म दूसरे के पूर्ण धर्म से श्रेष्ठ है अपने धर्म में प्राणभी देना कल्याण कारी है और दूसरे का धर्म भयदायक है हे अर्जुन कपिलाके दूध पीनेसे ब्राह्मणी के संग गमन करने से बिष्णु भगवान की मूर्ति छूने से शुद्ध चाण्डाल के बराबर हो जाता है अगर वह मानले कि यह उत्तम बस्तुहै इसको हम क्यों न छुवैं तो वह चाण्डाल तुल्य

होकर पापका भागी अवश्य ही होगा । इस
लिये अपने अपने कुलोचित धर्म को अवश्य
करना चाहिये और उसी से उसका कल्याण
है । इतनी वार्ता सुनकर अर्जुनने कहा कि हे
कृष्ण ! पुरुष किसकी प्रेरणा से पाप करता है
इस प्रश्न को सुनकर श्री कृष्णचन्द्रजी बोले
कि हे अर्जुन ! जिस पुरुष को तृप्ती नहीं है
उसको रजो गुणसे उत्पन्न क्रोध और काम-

ना। निन्दित कर्म में लगा देते हैं और वही क-
र्म उस पुरुष की मुक्ति के नाशक होते हैं। म
नुष्य की कामना कभी रुकती नहीं है यह
सदैव बढती ही रहती है इस कारण हे भारत-
र्षभ! प्रथम आप इन्द्रियों को जीत कर का-
म को मारो जो बड़ा ही अजेय है।

इति श्री भवद्गीतासूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृश्णार्जुन
सम्वादे कर्म योगो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ गीताके तृतीय अध्याय का माहात्म्य।

श्रीभगवान जी बोले कि हे लक्ष्मी ! अब तुम गीता के तीसरे अध्याय के माहात्म्य को सुनो ! एक शहर में एक ब्राह्मण कौशिक के वंश में उत्पन्न बड़ा धनी था उसका संग कु-मार्गियों का होने से धीरे धीरे उसका धन कु-मार्ग में सब खर्च होगया और वह ब्राह्मण दुः-खी होकर चोरी करने लगा एक दिन बहुत

सा धन चुराकर रास्तेमें आता था कि दूसरे
चोरोंका झुंड वहांपर आनिकला इस ब्राह्म-
ण ने देखा कि कहीं मुझसे यह लोग धन छी
न न ले तो वह एक बरगद के वृक्ष के नीचे अं-
धेरे मे छिप गया दैवात् उन दूसरे चोरों ने उसे
देखही लिया और उसके निकट जाय उस ब्रा
ह्मण को मारडाला और धन लेकर दूसरे वह
चोर लोग चले गये कुछ समय बाद यह हाल

उस ब्राह्मणी को मालूम हुआ वह भी रो पीट कर चुप होगई और वह ब्राह्मण प्रेत योनि को पाकर उसी बरगद पर रहने लगा कई वर्ष बाद जब उस ब्राह्मण का पुत्र सयाना हुआ और वह पंडित था तो माता से निज पिता का हाल जानकर पिता के उद्धार हेतु काशी और गया की यात्रा किया रास्तेमें चलते चलते उसी बरगद के निकट से वह निकला

अ०२

१०२

वहां पर सायंकाल होगई थी सन्ध्योपासन हेतु उस ब्राह्मण के पुत्र ने वहीं पर विश्राम किया और नित्य कर्म सन्ध्योपासनादि करके भगवान् की इच्छा से वह नित्यगी- ता का एक अध्याय पाठ किया करता था तो वह गीताके तीसरें अध्याय का पाठ करने लगा त्योंही अध्याय पूर्ण हुआ उसी क्षण उस बरगदमें बड़े जोरों का शब्द हुआ और विष्णु

भगवानके गण विमान लिये आकर उपस्थि
त हुये और वह प्रेत योनिसे छूटकर दिव्य रू
प धारण करके उस बालक को आशीर्वाद दि
या तब उस बालकने प्रणाम करके आज्ञा मां
गी तो वह दिव्य देह धारी प्रेत पुत्रसे बोला कि
हे पुत्र ! हम गीताके तीसरे अध्यायको सुन
कर सब पापोंसे छूटकर वैकुण्ठ लोकको जा
ते हैं हमारे पुरिषा पेस्तर के सब नर्क में पड़े

हैं सो गया जी में पिंड दानादि करके घर जा
ओ और उनके छुटाने हेतु गीताके तीसरे अ
ध्याय का पाठ अनुष्ठानरूप में करो तो वह
मुक्त होजावेंगे यह कह कर ब्राह्मण तो प्रेत
योनिसे छूटकर विमान में चढ स्वर्गको गया
और उस बालक ने गया श्राद्धादिसे निवृत्त
होकर गीताके तीसरे अध्याय का पाठ कर-
ना प्रारम्भ करदिया कि जिसके द्वारा उसके

पूर्वज सभी नर्क से निकल कर स्वर्ग चले गये
यह हाल देखकर यमराज जी बहुत घबड़ाये
और देवतोंको संग लेकर नारायण के पास
गये और भगवान की अनेक भांति से स्तुति
करके अपने आनेका कारण कहा तब श्री
शेषशायी भगवान मुसकराकर कहने लगे
कि देखो हे धर्मराज ! यह गीता के पाठका प्र
भाव है एक एक अक्षर का यह माहात्म्य है

अ० २

१०७

आप इस विचार सें न पड़ैं जो कोई गीता यह शब्द उच्चारण करके प्राण त्याग करता है तो उसे आप अपने यहां नहीं रख सके हैं इस भांति यमराज को श्रीनारायण ने समझाकर निज स्थान को वापस किया। इस पुनीत माहात्म्य को जो पढ़ता व सुनता है वह संसार के कष्ट को सहज में पार करके मोक्ष पाता है।

इति श्री पद्मपुराणे सतीस्वर संवादे उत्तरखण्डे श्रीगीतायां
वर्तायोध्यायः माहात्म्यं समाप्तम्।

अथ चतुर्थ अध्याय प्रारम्भः।

श्री कृष्ण भगवान ने कहा कि हे अर्जुन! इस नाश रहित योग को हमने प्रथम सूर्य से कहा था और सूर्य ने मनु से और मनु ने राजा इक्ष्वाकु से कहा इसी भांति यह कर्म योग परस्पर एक से एक के प्रति चला आया परन्तु हे परंतप! इधर बहुत दिनों से यह योग लोप हो गया था सो आज मैंने तुमारे प्रति फिर वर्ण

न किया है। यह सुन अर्जुन ने कहा कि हे कृ
ष्णा! श्रीसूर्य भगवान की सृष्टि आपसे बहुत
पेस्तर हुईथी और आपका तो जन्म अभी हु
आ है तो इस योग को सूर्य प्रति आपने कैसे
वर्णन किया ? श्रीकृष्णचन्द्र जी बोलेकि हे
अर्जुन! हमारे और तुमारे बहुत जन्म व्यती
त होगये उनसबको हम जानतेहैं तुमको नहीं
मालूम है हे परंतप! जन्म रहित अविनाशी

मैं अपनी प्रकृति को ग्रहण करके अपनी मा-
या से उत्पन्न होता हूं । हे भारत ! जिस जि-
स समय धर्मकी घटती होने लगती है और
अधर्म की बढ़ती होने लगती है उसी उसी स
मय मैं जन्म अवतार धारण करता हूं कि जि
ससे साधुओंकी रक्षा करने के लिये और अ-
धर्म के नाश हेतु युग युगमें अवतार लेता हूं।
मैं अवतार लेकर दंड का विधान करके यथा

अ० ३

१।१९

वत वर्णाश्रम धर्म की रक्षा करता हूं तब वह पुरुष प्रीति और भय व क्रोध को त्याग कर मुझमें मन लगाये हुये तप और ज्ञान से पवित्र होकर हमारे स्थान को पहुँचते हैं। जिस भांति वह मेरा भजन करते हैं मैं भी उनको उसी भांति मानताहूं इस मनुष्य लोकमें कर्म के फलकी सिद्धि शीघ्रही होती है। गुण और कर्म से हमने चारों वर्णों को उत्पन्न कि

या उसका कर्ता और अकर्ता मुझ अविनाशी कोही जानो तिसपर भी यह कर्म मुझमें नहीं लिपटते हैं और मैं सदैव कर्म फल की इच्छा नहीं रखता हूँ इसी से मैं कर्म बन्धन में नहीं बँधता हूँ । इसी भांति हे अर्जुन ! तुमभी कर्म करो बड़े बड़े चतुरलोग कर्म और अकर्म के विचार में मोहित रहते हैं उसको हम बर्णन करते हैं जिसको सुनकर तुम संसार के बन्धन

अ० ४

११२

से छूट जाओगे। कर्म के फलकी इच्छा को छोड़कर जो बुद्धिमान लोग कर्म करते हैं उनको लोग ज्ञानी कहते हैं। आशा से रहित मनोरथों को त्यागकर जो कर्म लोग करते हैं उससे उनको पाप नहीं होता और वह कर्मके बंधन में नहीं फँसता और उसके सम्पूर्ण कर्म लय हो जाते हैं। कोई योगी समस्त कर्म करके ब्रह्मार्पण करदेते हैं कोई देवतों की उ

पासना करते हुये यज्ञोंके द्वारा देवताओं का पूजन करते हैं कोई इन्द्रियों के दमन हेतु इन्द्रियों के कर्म को इन्द्रियोंही में हवन करते हैं कोई द्रव्ययज्ञ तपयज्ञ योगयज्ञ स्वाध्याययज्ञ ज्ञानयज्ञ इन पांच भांति के यज्ञोंको कोई थोड़ा और कोई सब पांचों को दृढ व्रत होकर करते हैं कोई योगी प्राण अपानादि स्वासाओं के प्राणायामादि मार्ग में लगे रह-

ते हैं इस भांति के बहुत से यज्ञ हैं परन्तु यज्ञ
पाप के नाश करने वाले होते हैं इनको तुम
जानकर मुक्त हो जाओगे। हे परंतप! द्र-
व्य यज्ञ से ज्ञानयज्ञ श्रेष्ठ है जिस ग्यान को
जानकर आज जो यह भ्रम तुमको उत्पन्न
हुआ है सो फिर न होगा और संपूर्ण सृष्टिको
अपनी आत्मा में और अपने को मुझमें दे-
खोगे। कदाचित तुम सब पापियों में उत्तम

भी गिने जाओ तो भी ग्यानकी नौका से तुर-
न्त सब पापों से पार उतर जाओगे । जैसे ज
लती हुई अग्नि ईंधन को भस्म कर देती है उ
सी भांति ग्यानरूपी अग्नि सब पापों को भ-
स्म कर देती है । ऐसा यह उत्तम ग्यान हमने
तुमसे कहा है कि जिस ग्यानको पाकर मनु-
ष्य शीघ्रही मोक्ष पद को पाता है और इसमें
सन्देह रखने वालेको इसलोक और परलो-

अ०४

११७

क में सुख व मोक्ष कुछ भी नहीं मिलता है ध
नंजय ! कर्म फल त्यागी और आत्मग्यानी
को कर्म अपने में बाँध नहीं सकता है हे भार-
त ! तुमारे हृदय में जो यह ग्लानि उठी है उ
सको कर्मयोग रूपी तलवार से काटकर युद्ध
के लिये पुरुषार्थ करो तुमारा इसमें कल्याण है

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृश्णार्जुन
सम्वादे कर्म सन्यास योगो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ गीताके चौथे अध्यायका माहात्म्म ।

श्रीभगवान् ने लक्ष्मीजीके प्रति कहा कि हे प्रिये ! गीता के चौथे अध्याय का माहात्म्य सुनो । गङ्गाजीके तटपर जहां श्रीविश्वेश्वरजी विराजमानहैं वहां पर एक भरत नामक मुनि हुये हैं वह सदैव गीताका पाठ किया करते थे एक दिन तपस्वी भरतजी शान्त चित्त गीताकापाठ करतेहुये जंगलमें चलेगा-

येंतो वहांपर दोबेरीकेवृक्ष अत्यन्त सुहावनेथे उन्हें देखकर कुछदेर विश्राम हेतु वहीं पर एक वृक्षमें तो उन्होंने शिर लगाया और दूसरे में पैर लगाकर लेट गये और गीताके चतुर्थ अध्याय का पाठ कर रहेथे. अध्यायके पूर्ण होने पर वहांसे भरतजी चलदिये और वह सुहावने बेरीके वृक्ष शूखने शुरू होगये वह दोनों जड़ योनिसे छूटकर किसी ब्राह्मण के

यहां कन्या रूपसे एकहीघर उत्पन्नहुये यह कथा लक्ष्मीजी सुनकर श्रीनारायणसे कहने लगी कि हे प्रभो ! वह वेरीके वृक्ष दोनों पूर्वजन्ममें कौन थे और किस कारण उनको जड़योनि मिली सो मुझपर कृपाकरके कहिये श्रीनारायणने कहा कि यह दोनों इन्द्रकी सभामें अप्सरायें थीं किसी समय गोदावरी नदी के किनारे छिन्नपापके नामसे प्रसिद्ध

तीर्थपर सत्यतपा मुनि घोर तपको करते थे
उस तपस्याको देखकर इन्द्र घबराये और उ
न दोनों अप्सराओं को भेजा कि इनका तप
भंग करो इन्द्रकी आज्ञापाय यह दोनों अ-
प्सरायें मुनिके पास आकर हाव भाव कटा-
क्षसे युक्त गीत गाने लगीं और अपने गुप्तअं
ग दिखाकर मुनिजीको मोहित करनेका उ-
द्योग करने लगीं । यह चरित्र देख मुनिको

क्रोध आया तो हाथमें जल लेकर शाप दिया
कि तुम जड़योनि कंटकयुक्त होजाओ इस
शापको सुनकर वह दोनों अप्सराओंने अने
क भांतिसे मुनिको प्रणाम करके स्तुति कर
के शापका उद्धार पूँछा तो मुनि ने कहा कि
तुह्मारी छायामें बैठकर जब भरतमुनि गीता
के चौथे अध्याय का पाठ करेंगे और तुमको
छूवैंगे तब तुह्मारी जड़योनि छूटकर आह्मया

के घर कन्या होकर उत्पन्न होवोगी और तु-
मको यह कथा पूर्व जन्मकी स्मर्ण रहे-
गी हे लक्ष्मी ! इस भांति उन कन्याओं का
हाल है जब वह कन्या आठवर्ष की हुई तब
अकस्मात् भरतजी वहां पर घूमते हुये पहुँ-
चे तो उन कन्याओं ने मुनिको देखकर नम-
स्कार करके आदर पूर्वक पूजन किया और
आपके द्वारा हम मुक्त हुईं सो पूर्व जन्मका पू

व वृत्तान्त कह सुनाया मुनिजी भी सुनकर अति प्रसन्न हुये और परस्पर वार्ता करके मुनि भरतजी अपने आश्रम को चले गये और वह दोनों कन्यायें इस जन्म में सांसारिक सुख भोगकर अन्त में गीता के चौथे अध्याय के प्रभाव से उत्तम गति को प्राप्त हुईं।

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संबादे श्रीगीतायां

चतुर्थोऽध्यायः माहात्म्यं समाप्तम्।

अथ पञ्चमोऽध्याय प्रारम्भ ।

अर्जुन ने कहा कि हे कृष्ण ! आप एक त
रफ़ कहते हैं कि कर्मका त्याग उत्तम है दूसरे
ओर आप कहते हैं कि कर्म योगकरो यह सं-
देह युक्त वार्ता कैसी ? मेरे भ्रमको आप शा
न्त करिये। श्रीकृष्णचन्द्रने कहा कि कर्मका
त्याग और कर्मका स्वीकार यह दोनोंही क-
ल्याण दायक हैं परन्तु इन दोनोंसे वैर न र-

करते हैं उसी पुरुष को सन्यासी जानना चाहिये सांख्य और योग दोनों एकही है और दोनों का फलभी एकही है हे महाबाहो ! बिना क र्मयोग के सन्यास की प्राप्ति अति दुःखसे हो ती है और कर्मयोगमें लगे हुये मुनि शीघ्र ब्र- ह्म में मिलजाते हैं जो योगी अपनी और पराई आत्मा एक रूपसे देखने लगते हैं तो फिर उनको कर्म बन्धन का भय नहीं रहता

अ० ५

१२७

है। जो योगी यह जानता है कि इन्द्रियां जो कुछ करती हैं वह इन्द्रियोंका स्वभाव ही है मैं इसमें कुछ नहीं करता और जो कुछ किया कर्म है वह सब ब्रह्म में अर्पण है तो उसको किसी तरह का पाप नहीं लगता और वह निष्काम कर्म द्वारा मुनि मुक्त हो जाता है और जो सकाम कर्म करता है वह तो अवश्य कर्म बन्धन मे फँसा रहता है उसकी मुक्ति न-

हीं होती है। संसार को रचने वाला न कर्म क
रता है न कराता न कर्मों के फलके देने वाला
ही है यह सब स्वभावके आधीन वर्तते हैं। ई
श्वर सर्वव्यापी सामर्थी किसीका पाप पुण्य
नहीं लेता है। ज्ञानरूपी अग्नी अज्ञानरूपी
राखसे ढँकी रहती है उसीसे समस्तजीव मो-
हमें पड़े रहते हैं जिनको यह भेद मालूम हो
गया उनके हृदय में ज्ञानरूपी सूर्य का उदय

अ० ५

१८६

जानो जिसकी बुद्धि आत्मामें लगी है और व
ह उसीके शरण में है वही ग्यान युक्त पुरुष
मुक्तिके स्थानमें पहुँचते हैं । जो लोग सम-
दर्शी ग्यानी पण्डित हैं वह ब्राह्मण गौ हाथी
कुत्ता और कुत्ताके भोजन करने वाले चा-
ण्डालको भी बराबर ही देखते हैं जिन पुरुषों
का मन समतामें दृढ़ होगया उन्होंने समस्त
जगत को जीतलिया और वही सर्वव्यापक

पूर्णं ब्रह्ममें स्थित रहते हैं। जो सुखके आने
पर प्रसन्न नहींहोते और दुःखके आनेपर घ
बड़ाते नहीं उन्ही की बुद्धि स्थिर है और वही
ब्रह्म में लय होते हैं जिनका मन इन्द्रियोंके
स्वादमें नहीं लगता और अन्तरात्मा परमे-
श्वरमें चित्तलगाये रहतेहैं वह अनंत सुखको
पाते हैं। जो सुख और भोगकी कामना इन्द्रि
यों के स्पर्शसे होतीहै वह दुःख की खानि है

हे कौन्तेय ! जो पदार्थ आदि अन्त वाले हैं उ
नमें बुद्धिमान जन मन को नहीं लगाते जो
पुरुष शरीर छोड़ने के पहिले काम और क्रो-
धके वेगको सहन कर सकता है वही पुरुष यो
गी है और वही सुखी है जिसका अन्तः कर-
ण शुद्धभावसे युक्त ब्रह्मका उपासक है व-
ही ब्रह्ममें लय होता है जिन पुरुषोंके पाप दू
रहो गये हैं और मन वशमें है जो समस्त प्रा-

णीमात्रमें अपने और परायेका भेद नहीं र-
खते और जगतके उपकारमें चित्तको लगा
ते हैं वह ब्रह्मनिर्वाणपदको पाते हैं काम क्रो
धसे रहित संन्यासीलोग मनको वशमें रखने
वाले और आत्माके तत्व को भली भांति जा
नने वाले ब्रह्मनिर्वाण में मिलजाते हैं। जो
योगी इन्द्रियोंके सुखको मनसे हटाकर नेत्रों
की दृष्टि दोनों भौंहों के मध्य स्थिर करके प्रा-

२०५

१३३

ण अपान वायु को सम करते हैं और इन्द्रिय मन बुद्धिको वश में किये इच्छा भय क्रोध जिसको नहीं है वह योगी सदैव मुक्तही है। यज्ञ और तपस्याकों अंगीकार करनेवाला सब लोकोंका महाप्रभु समस्त जगत का मित्र जो मुझे जानता है वह अवश्य मुक्तिको पाताहै।

इति श्री भगवद्गीतासूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सम्वादे सन्यास योगो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

अथ गीताके पांचवें अध्याय का महात्म्य।

श्री महादेव जी और पार्वती का सम्बाद हो रहा है श्रीशंकरजी ने पार्वती से कहा कि जिस भांति हम यह गीता के अध्याय अध्याय का माहात्म्य वर्णन करते हैं इसीको पेस्तर शेषशायी नारायण ने लक्ष्मी प्रति कहा है सोई कहता हूँ। श्रीनारायण ने लक्ष्मी जी से कहा कि हे प्रिये अब तुम गीताके पांचवें अ-

ध्यायका महात्म्य सुनो । पुरुकुत्सपुरमें वेद
के पढ़ने वाले कुलमें पिंगलनामक एक ब्रा-
ह्मण हुआ जो कुलके धर्म को छोड़कर ना-
च गाने बाजाओं के बजाने में अति प्रीति कर
ने लगा और अपने को गानाविद्यामें अति नि
पुण जानकर राज्य सभामें जाने लगा वहां
पर भी उसका बड़ा आदरहुआ परन्तु कामी
होने के कारण वह अन्यास्त्रियों में रमण कर-

ने लगा उसकी स्त्रीका नाम अरुणा था वह
दुष्टात्मा दूसरे पुरुषोंपर स्नेह करके उनके
साथ वेश्यावृत्तिकी तरह छिपे हुये रमण क-
रने लगी एक दिन उस स्त्री के चित्तमें आया
कि कहीं मेरा पति यह हाल जान जावैगा तो
मुझे दुःख देगा यह विचार करके आधी रात
के समय अपने पतिके शिरको काटकर ज-
मीनमें गाड़दिया यमराज के दूत आकर उ-

स ब्राह्मण को पकड़कर लेगये और यमकी आज्ञा से अनेक भांति के नरकों का दु:ख भोगकर मनुष्य हीन बनमें गृद्ध योनिमें उत्पन्न हुआ और उसकी दुष्टात्मा स्त्री को भगन्दर रोग हुआ जिस से वह भी मरकर घोर नरक को भोगकर उसी बनमें तोती (सुग्गी) का जन्म हुआ आकस्मात् वह दोनों गृद्ध और तोती इकट्ठे हुये परन्तु दोनों को पूर्व ज-

न्म का हाल याद था गृद्ध ने कहा कि यह
मुझे मारने वाली पूर्व जन्म का स्त्री है और
तोती को भी स्मर्ण आया कि यह मेरा पूर्व
जन्म का पति है इस भांति पूर्व जन्म का हा-
ल याद करके गृद्ध उस तोती को मार डाल
ने हेतु दौड़ा और वह तोती भगी भगते भगते
एक चिता भूमि (जहां मुरदे जलाये जाते हैं)
में आकर गिरी तो वहां पर एक गीता के पाठ

३०५

करने वाले मुनिकी खोपड़ी पड़ी थी जो पां-
चवें अध्याय गीताके पाठ करते करते मृत्यु
को प्राप्त हुये थे वर्षा ऋतु के कारण उस खो
पड़ी में जल था उस जलमें तोती गिरी पीछे
से वह गृद्ध भी गिरा दोनों को उस जल का
स्पर्श हो गया तो वह पवित्रात्मा हो गये और
उन दोनों की उसी में मृत्यु होगई पापात्मा
जानकर यमराज के दूत उन दोनों को पकड़

लेगये यमराज ने उन्हें देखतेही आज्ञा दिया
कि तुम जिस लोकमें जाया चाहो वहां चले
जाओ तुमारे लिये हमारे यहाँ स्थान नहींहै
यमराज की आज्ञा सुनकर वह दोनों स्त्री पु-
रुष बोलेकि हम दोनोंहीं दुष्टात्मा हैं हमारा
बास आपके ही लोकमें होना उचित है इस
का कारण क्याहै जो आप मनोबांछित लोक
में जानेकी आज्ञा देते हैं ? तब यमराज ने मु

नि की खोपड़ीके जलका स्पर्श और गीताके
पांचवें अध्यायके महात्म्यके प्रभाव को कहा
इसीसे तुम दोनों पवित्रात्मा होगये हौ तबवह
दोनों प्रसन्न चित्त यमराज को प्रणाम करके
विमान पर चढ़ विष्णुलोक को चलेगये। हे
लक्ष्मी! यह गीताके पांचवें अध्याय के पाठ व
श्रवणका माहात्म्यहै जो हमने तुमसे कहाहै।

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संबादे श्रीगीतायां
पञ्चमोध्यायः माहात्म्यं समाप्तम् ।

अथ छठवां अध्याय प्रारम्भः ।

श्रीकृष्णचन्द्र भगवान ने कहा कि हे अ-
र्जुन ! अग्निहोत्रादि कर्म और कर्म का त्या
गी संन्यासी नहीं कहाता संन्यासी वही है
जो कर्म के फलका आसरा छोड़कर कर्तव्य
कर्म को करता है उसीको संन्यास कहते हैं
और उसीको योग जानो बिना संकल्प त्यागे
योगी नहीं होता जिस समय इन्द्रियों के विष

य में श्रौर उनके कर्म में प्रीति न होवे वैसेही
कर्म करते हुये किसी पदार्थ के लाभकी इ-
च्छा न होवै तब उसे जानो कि योगमें इसका
चित्त लगा हुआ है। इससे समस्त प्राणी मा-
त्र को जानना चाहिये कि अपनाही मन अ-
पना मित्र है श्रौर अपनाही मन अपना शत्रु
है जिसने अपने मनको अपने वश किया व-
ही मन उसका मित्र है बिना वशकिया हुआ

मन शत्रु की भांति घात करता है। मन और
इन्द्रिय वश करने वाले और बन्धनसे मुक्त पु
रुष को परमात्मा प्रकाश करके उसके निकट
शर्दी गर्मी सुख दुःख मान अपमान ज्ञान वि-
ज्ञानसे जिसकी आत्मा तृप्त है और विकारसे
रहित जितेन्द्रिय है उसी योगी को योग्य कह-
ते हैं जो कि लोहा पत्थर और सोनेको समान
जानता है। जो सदा एकान्त में अकेला बै-

अ० ६

१५५

ठकर आत्मा में चित्त लगाये शरीर और सबइ न्द्रियों व मन को बश में करके औ र कामना को छोड़कर भजन करता है वही योगी परमोत्तम है (अब योगीकी साधना बिधि कहते हैं) सुन्दर पवित्र स्थान में आ-सन लगाकर शरीर मन इन्द्रियको अचल कर और समान भूमिमें कुशा या मृगछाला को बिछाकर उसपर द्रढ आसन लगाकर बै-

ठे और शुद्धचित्त होकर परमात्मा में मन ल गावै । शरीर और मस्तक व गर्दन को सीधा अचल रखकर नाकके टुन्नू में दृष्टि ठहराकर किसीके भी ओर न देखे और मेरेमें चित्त ल गाये हुये मनको वशमें किये योगसाधन करै इस भांति योगके साधन करने से योगी परम शांतिको पाता है और अन्तमें मेरा रूप हो जाता है । बहुत भोजन और थोड़ा भोजन

अ०६

१४७

से योग नहीं होता है इस लिये सम भोजन योगी को उत्तम होताहै। जिस समय चित्त आत्मा में स्थिर होजावै उसी समय आत्मा मे लीन वह हो जाता है जिस भांति बन्द कोठरी में दीपक रखदिया जाय और उसकी ज्योति किसी तरफ को हिलती नहीं है उसी भांति मनको एकाग्र करके मनको आत्मामें लगाना चाहिये और सुख दुःख को एक स-

मान जानकर मनके संकल्प विकल्प आदि
मनारथों को जड़से त्याग देवै तब योगकरै इ-
सी भांति के योग साधन करने वाला पुरुष ज
हां उसका मन स्थिर होगया और रजोगुण व
तमोगुण उसके पास से भाग गये तभी वह अ
त्यन्त सुखको पाता है । जिस समय योगी-
का मन स्थिर होकर सब जगतको अपने में
और अपने को सब प्राणियों में देखता हुआ

सब जगह समान ब्रह्मको देखता है कि सर्वत्र ईश्वर व्यापक है तो मैं उसका नाश नहीं करता। हे अर्जुन! जो पुरुष अपनी तरह सबके सुख दु:ख को बराबर देखता है वह योगी बहुत बड़ा ज्ञानी है। यह योगमार्ग श्री कृष्ण प्रति अर्जुन सुनकर बोले कि हे मधुसूदन! आपने जो सबको समान जानना यह योग कहा सो मनकी चंचलता के कारण स्थित मन हो

ना और यह योग साधना बहुत ही कठिन है हे कृष्ण ! यह चंचलमन शरीर और बुद्धिको घबड़ा देनेवाला अति बलवान हठी इसका रोकना हम अति कठिन मानते हैं। जिसका मन वश में नहीं है उसको यह योग बड़ाही कठिन है। इस कारण हे कृष्ण ! जिसने योग करना प्रारम्भ किया और इन्द्रिय वश में नहीं हुई और चंचल मन योगसे हटगया तो

अ०६

१५१

उसकी क्या गति होगी ? और वह क्या बाद-
लके टुकड़े की भांति नाश हो जाता है हे म-
हाबाहो ! योगमार्ग से हटा हुआ ब्रह्मज्ञान से
रहित वह पुरुष किस गतिको पाता है इस मेरे
संशय को आप हटाइये । श्रीकृष्णचन्द्र भ-
गवान्‌ने कहाकि हे पार्थ ! उस योग भ्रष्ट पुरु
षका इस लोकमें और परलोकमें नाश नहीं
होता वहपुण्यात्माओं के लोकमें जाकर व-

हुत समय वास करते हुये सुख भोगकर धनि
क और कुलीनों के घरमें बुद्धिमान पुरुषकी
श्रेणीमें जन्म पाता है और पूर्व जन्मके सं-
स्कार से फिर वह योग साधन का उपाय कर-
ता है अगर फिर भी उसका यत्न ठीक उतर
गया तो वह फिर मुक्त होजाता है हे अर्जुन !
हमारे मत से तप करनेवालों से ज्ञानियों से
कर्म काण्डियों से योगी उत्तम है इस कारण

हे महाबाहो ! अर्जुन आप योगी होजावें सब योगियोंमें भी जो श्रद्धा भावयुक्त शुद्ध अन्तः करण मुझमें लगाकर मेरा ही भजन करते हैं वह सब योगियोंसे श्रेष्ठ हैं और वही पूरे योगी हैं

इति श्री भवद्गीतासूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृश्णार्जुन
स्म्वादे आत्मसंयम योगोनाम षष्टमोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अथ गीताके छठवें अध्याय का महात्म्य ।

श्रीभगवान बोले कि हे लक्ष्मी ! अब तुम

गीताके छठवें अध्यायके महात्म्यको ध्यान
पूर्वक सुनो गोदावरी नदीके किनारे इन्द्रकी
पुरी के तुल्य एक प्रतिष्ठान नामक बड़ाभारी
पुर है जहाँ का राजा ज्ञानश्रुति नामक था
जिस राजाके यहां समस्त कामनाओं के पू-
र्ण करने वाली समग्री सदैव स्थित रहती थीं
एक दिन यह ज्ञानश्रुति राजा अपने महल
के ऊपर विराजमान था और हँसों के झुंड के

झुंड उड़ते हुये बड़े वेगसे चले जातेथे पीछेवा
ले झुंडके हंसोंने कहाकि किस हेतु इतनी ज-
ल्दी उड़ते हो धीरे धीरे चलो तब आगेके हंसों
ने कहा कि तुम नीचे देखो कि क्या अति प्र-
तापवान् राजा ज्ञानश्रुति बैठा है उसका और
रैक्य मुनिका यह तेज है इस वार्ताको सुनक
र राजाने सारथी को बुलाया और आज्ञा दि-
या कि शीघ्र रैक्य मुनिको ढूँढकर लाओ सार

थी आज्ञा पाकर पृथ्वी के समस्त तीर्थों मे घू
मता हुआ बद्रिकाश्रम के निकट काश्मीर दे
शमें रैक्य मुनि को सारथीने देखा तुरन्त द-
राड प्रणाम करके अनेक भांतिसे मुनि जी
की स्तुति किया और राजा के कहे हुये सन्दे
शा को कह सुनाया रैक्य महाराज ने सारथी
को सम्बोधन किया और अनेक भांतिकी बा
तीयें सारथीसे हुईं । सारथी वहां से लौटकर

१।७

राजा ज्ञानश्रुति के पास आया और रैक्य मु-
निका तेज प्रताप आदि हाल कह सुनाये तव
राजा दो घोड़े की गाड़ी सजाये मोतियोंके हा
र रेशमी कपड़े और हजारों गौवोंको संगलेक
र रैक्यके पास पहुंचा और समस्त सामग्री
सामने रखकर पृथ्वीमें गिरकर दंडवत नम-
स्कार किये तव मुनिजी राजाके ऊपर क्रोध
करके बोले कि इस अपनी सवारी और मोति

यों के हार और समस्त सामग्री उठाले जा-
ओ तबतो राजा बहुत डरा और मुनिजीके
चरण पकड़कर अनेक भांतिसे स्तुति किया
और कहा कि हे ब्रह्मन्! आपका यह अत्यन्त
अद्भुत तेज और महात्म्य कहां से हुआ मुझ
पर दया करके सब हाल कहिये ? तब रैक्य
मुनिजी बोले कि हे शूद्र ! मैं गीताके छठवें
अध्याय को नित्य पढ़ता हूँ इसीसे देवताओं

के भी दुःसह तेज की राशि मैं हूं और तू गीता के अभ्यास से रहित है तब तो राजाने मुनिको प्रणाम करके गीता के छठवें अध्याय को जाना और उस अभ्यास करके मुक्तिको प्राप्त होगया मुनि रैक्यजी गीताके छठवें अध्याय को पाठकर सुख को प्राप्त हुये हे लक्ष्मी ! जो गीता के इस छठें अध्याय को नित्य पढ़ता है वह निस्सन्देह विष्णु जीकी पदवी को प्रा-

स होता है।

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संवादे श्रीगीतायां

षष्ठमोऽध्यायः माहात्म्यं समाप्तम्।

अथ सप्तमोऽध्यायःप्रारम्भः।

श्रीकृष्णचन्द्र भगवानने कहा कि हे पार्थ! मेरा आश्रय करके मेरे आसक्त मन होकर योग के अभ्यास करनेसे निस्सन्देह मेरा पूर्ण ज्ञान आपको होगा सो सुनो कि जिस को जानकर फिर संसार में कोई भी वस्तु जान-

ने योग्य न बच्च रहैंगी जगत मैं पृथ्वी जल वा-
यु अकाश मन बुद्धि अहंकार यह आठ प्रका
र की प्रकृति भिन्न हैं इसके अलावे जीवरूप
अलग है इन्हीं सबसे जगत की उत्पत्ति और
नाश होता है हे अर्जुन ! मुझसे परे कोई दू-
सरा बड़ा नहीं है यह जगत सब मुझमें स्थित
है जिस तरह मोती डोरा में पराये होते हैं उ-
सी भांति मुझमें यह सब पराये हुये हैं। हे कौं

तेय ! जलमें स्वाद चंद्र सूर्य में प्रकाश वेदों
में प्रणव आकाश में शब्द मनुष्यों में पुरुषा
र्थ मिट्टी में सुगंध अग्नि में तेज सब प्राणियों
में जीवन और सब तपस्या करने वालों में तप
मैंही हूं । हे पार्थ ! समस्त सृष्टि का बीज मुझ
को जानो बुद्धिमानोमें बुद्धि तेजवाले पदा-
र्थों में तेज और प्रकाश मैं हूं । बलवानोंमें बल
कामनारहित कामना धर्मके अनुकूल चलने

अ०७

वाले पुरुषोंमें काम मैं हूं । सतोगुण-रजोगुण तमोगुण यह तीनों गुण मुझसे उत्पन्न हैं और मैं इनके वशमें नहीं हूं इन्हीं तीनों गुणों के प्रभाव में यह समस्त जगत मोहित है और सबसे श्रेष्ठ नाशरहित मुझको नहीं जानते हैं यह मेरी अलौकिक माया है इसको पार करना अति मुश्किल है जो पुरुष मेरी शरण में आजाते हैं वही पुरुष इस माया जाल से

पार जाते हैं। माया के प्रभाव से मोहित हुये पापी और मूर्ख लोग मेरी शरण नहीं आते और वह असुर भाव का आसरा करते हैं। हे भरतर्षभ ! दुःखी ज्ञान की इच्छावाले संसार की कामनावाले और ज्ञानी यह चार प्रकार के मनुष्य मेरा भजन करते हैं इन चारों में ज्ञानी कोमैं और मुझको ज्ञानी अति प्रिय है कारण कि अनेक जन्मों के अंतमें ज्ञानी

४०७

होकर मुझको पाता है और जिन पुरुषोंकी बुद्धि मन की कामना से नष्ट होगई है वह अन्य देवताओं का भजन पूजन किया करते हैं और जिसके भजन पूजन में जिसकी मति लगगई उस पुरुष को मैं उसी में श्रद्धा उत्पन्न कर देता हूं और अन्त में उसे मेराही दिया पदार्थ मिलता है परन्तु वह सब पदार्थ नाशवान् होते हैं। हे अर्जुन ! मैं सबको प्रत्य

क्ष देख नहीं पड़ता मैं तो योग माया करके छिपा हूं जो लोग होगये हैं जो यह वर्तमान हैं और आगे जो लोग होंगे उन सबको मैं जानता हूं परन्तु वह कोई भी मुझको नहीं जानते वह तो सदैव सुख दुःख के अनुभव करने में मोहित रहते हैं। जिन पुण्यात्मा पुरुषों के पाप नाश होगये हैं वह पुरुष द्वन्द और मोहसे छूटकरके दृढ़व्रत के साथ मेरा

भजन करते हैं। साधि भूत साधि दैव और सा
धियज्ञ जो मुझे जानता है और वृद्धापनमें
मरण समय में जो मेरा आश्रय करके एका-
ग्रबुद्धि के द्वारा मेरेही में मन लगाये मेराही
भजन करते हैं वह लोग सम्पूर्ण मेरी अ-
ध्यात्म्य विद्या को जानजाते हैं और उन्हें अ
न्त में मोक्ष मिलता है।

इति श्रीभवद्गीतासूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे ज्ञान विज्ञान योग
वर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथ गीताके सातवें अध्यायका माहात्म्य ।

श्रीभगवान बोले कि हे लक्ष्मी ! अब तुम-
से गीता के सातवें अध्याय का माहात्म्य वर्ण-
न करते हैं सो ध्यान पूर्वक सुनो हे प्रिये पाट-
लि पुत्र (पटना) नामक शहर में शंकुकर्णना
मक ब्राह्मण होता भया। उस ब्राह्मणने ब्र-
ह्म कर्म को छोड़कर के वाणिज्य कर्म करके
बहुत धन इकट्ठा किया और अपना चौथा वि

वाह किया अकस्मात एकदिन लड़का और
भाइयों को संगलेकर रात्रि समय कहीं बाहर
गया कि जहां पर उस शंकुकरण ब्राह्मण
की भुजा के नीचे सांपने काटलिया और उ
सकी मृत्यु होगई तब लड़के और भाइयोंने
उसे नीम की पत्तीसे लपेटकर बाँधा उसी ज़
गह नीमका एक वृक्ष था उसीपर उस मुर्देको
रखकर घरचले आये। कुछ समय के बाद व

ह ब्राह्मण सर्प योनि को प्राप्त हुआ और पू
र्व जन्म की वासना के कारण वह सर्प उसी
के हाथ का गाड़ा गुप्त धन एक करोड़ रुपया
था वहां पर जाकर उसने अपने रहने का स्था
न बनाय उसी जगह वास करने लगा दैवात्
एक दिन उसने सर्प योनि से घवड़ाकर अपने
पुत्रों को स्वप्न दिखाया कि मैं तुमारा पिता
हूं और सर्प योनि में पड़ा हूँ मेरा उद्धार करो

४०७

१०१

मेरे पास एक करोड़ रुपया है मेरे उद्धार के
बाद तुमलोग लेलेना सवेरा होतेही उस ब्रा-

ब्राह्मण के तीनों पुत्रों मेसे बड़े ने पिता के उ-
द्धार के हेतु नारायण बलि आदि करनेका
विचार किया दूसरे ने सांपको मारकर धन
लेलेनेका विचार किया तीसरा पुत्र विचार क
रने लगा कि मेरे पिता ने ऐसा क्या काम ख-
राब किया कि जिससे सर्पयोनि उसे मिली है।

यह विचार होताही रहा कि मध्यपुत्र ने स्त्री से सलाह करके कुदार हाथमें लेकर और भाइयों से वहाना करके जहाँ पर उसका पिता सर्परूप में रहता था उस बांबी को आपतो खोदने लगा और उसकी स्त्री मिट्टी निकालने लगी। तब तो उस बांबी में से घोर कालरूपी सर्प फुफकार मारता हुआ निकला और बोलाकि रे दुष्ट ! तू कौन है और इसस्थान

अ०७

१७६

को क्यों खोदता है तब तो वह ब्राह्मण का लड़का बोला कि मैं आपका शिव नामक पुत्र हूँ रात्रि में मुझे स्वप्न हुआ था सोई धनके लालच से इसे खोद रहा हूँ यह पुत्र के वचन सुनकर सर्प ने कहा कि ठीक है प्रथम मेरा इस सर्पयोनिसे छुटकारा कराओ तब तुम इस धनको ले सक्तेहो उसका उपाय यह है कि दान धर्म कर्म और गयादि तीर्थों में पिंडदान

दि मुझे इस योनिसे नहीं छुटा सक्ते मेरी इस योनि छूटनेका मुख्य एक उपाय है कि मेरे श्राद्ध के दिन वेद विद्या में निपुण ब्राह्मण जोकि गीताके सातवें अध्याय का नित्य पाठ करता हो उसे बुलाकर गीता के सातवें अध्याय का पाठ मुझे सुनाओ और उसे योग्य भोजन कराके दक्षिणा देओतो मैं इस योनिसे छूट जाऊँगा और कोई उपाय मेरे इस योनि

से छूटने का नहीं है यह पिता की आज्ञा को
सुनकर पुत्र शीघ्र घर लौट आया और अपने
भाइयों से यह हाल कहकर पिता की आज्ञा
से अधिक सब लड़कों ने किया तब गीता के
सातवें अध्याय को वह सर्प सुनकर सर्प योनि
से छूटकर उत्तम देह को प्राप्त भया इसके बा
द वह धन सब लड़कों ने आपस में बांट लिया
और पिता के नाम से बावली कुआँ तालाव

देव मन्दिर आदि बनवाये और आप सब लो
ग गीताके सातवें अध्याय का पाठ करके पि-
ता सहित मोक्ष को प्राप्त हुये। हे लक्ष्मी ! य
ह गीताके सातवें अध्याय का माहात्म्य हमने
वर्णन किया कि जिसके पढ़ने व सुननें से म
नुष्य को उत्तम गति मिलती है।

अ०७

१,७७

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संवादे श्रीगीतायां

सप्तमोध्यायः माहात्म्यं समाप्तम् ।

अथ गीता का अष्टम अध्याय प्रारम्भः।

अर्जुन नें कहा कि हे पुरुषोत्तम ! तत् ब्रह्म क्या है कर्म क्या है अधिभूत क्या है अधिदैव क्या कहता है इस शरीर में अधियज्ञ कौन है ? मन को वश करने वाले लोग मरण समय में आप को कैसे जान सकते हैं सो आप वर्णन करिये। अर्जुन के प्रश्नों को सुनकर श्रीकृष्ण चन्द्रजी बोले कि हे पार्थ ! परम ब्रह्म अविना

शी ब्रह्मको अध्यात्म्य जगतका उत्पन्न क
रना लयकरने को कर्म कहते हैं अधिभूत ना
शवान स्वभाव है पुरुष अधिदैवत है शरीरमें
अधियज्ञ मैं हूँ जो अन्त मरण समय मेरा भ
जन करते हुये प्राणों को त्यागता है वह मेरे
भाव को पहुंचता है अन्त मरण समय जिस
जिस पदार्थ से मन लगाकर प्राणी शरीरको
त्यागता है वह उसी उसी पदार्थ को प्राप्त हो-

ता है । इस कारण हर समय मेरा स्मरण कर
ते हुये युद्ध को करो जो मेरे में मन और बुद्धि
को लगाये रहोगे तो मुझमें मिल जाओगे।
यतीलोग शरीर के दशों द्वारों को भली भां-
ति रोक करके मनको हृदय में और ब्रह्मांड
में प्राण को स्थापन करके योगधारणा में
स्थित हो वे मेराही स्मरणकरते हुये प्रणव का
उच्चारण करके शरीर को छोड़ते हैं वह परम

गतिको पाता है और मैं उसे प्राप्त हो जाता हूँ। हे अर्जुन ! ब्रह्मलोक समेत जितने लोक हैं सबमें पहुंच कर भी फिर जन्म लेनाहोता है और मुझे पाकर उसका फिर जन्म नहीं होता । ब्रह्मा के दिनमें तो सब जगत उत्पन्न हुआ करता है और रात्रि आतेही निराकार स्वरूप वाले मे लय होजाते हैं। हे अर्जुन ! परम पुरुष (परमब्रह्म) अनन्य भक्ति से ला-

म के योग्य है कि जिसके भीतर यह सब जग
त भरा हुआ है। हे भरतर्षभ ! छः महीना उ-
त्तरायण सूर्यमें और शुक्लपक्षमें जो देवतों
का दिन है उसमें जो देह त्याग करते हैं तो ब्र-
ह्मवेत्ता ब्रह्ममें अवश्य मिलजाते हैं और
छ महीना दक्षिणायन और कृष्ण पक्षमें देह
त्यागने से स्वर्ग जाकर भी फिर लौट आते हैं।
अनेक प्रकार के यत्न और फल वेदादि में व-

र्णन किये गये हैं वह सभी इस योग के जान-
ने वाले को प्राप्त होते हैं यानी उसका मोक्ष
हो जाता है ।

इति श्रीभगवद्गीतासूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे
अक्षर ब्रह्मयोगो नाम अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

अथ गीताके आठवें अध्याय का माहात्म्य।

श्री महादेव जी बोले कि हे पार्वती ! गीता
के आठवें अध्याय का महात्म्य सुनो जिस-
के सुनने ही से आनन्द को प्राप्त होवोगी द-

क्षिण दिशामें आमर्दक पुर अति प्रसिद्ध है तहां पर भाव शर्मा नामक ब्राह्मण हुआ जो वेश्याओं का संग करके सदैव निन्दितही कर्म किया करता था एक दिन ताड़ वृक्ष का मद (ताड़ी) उसने बहुत सी पीली जिसके कारण उसकी मृत्यु होगई और वह ताड़का वृक्ष हुआ अकस्मात् एक दिन स्त्री समेत एक ब्रह्मराक्षस उस ताड़ के वृक्ष के नीचे बैठ

कर आपस में बातें करने लगे कि हम दोनों
का यह महा दुःख कैसे छूटेगा तब ब्रह्म राक्ष
सने कहाकि बिना ब्रह्म विद्याके उपदेश अ-
ध्यात्म विचार के विना और कर्म विधि के
ज्ञान विना हम लोग इस संकट से नहीं छूट
सक्के। स्त्री ने पूछा कि हे महाराज ! ब्रह्म
अध्यात्म और कर्म क्या हैं इतना स्त्री के पू-
छते ही यह बड़ा आश्चर्य हुआ कि गीताके

अ० ८

१८५

आठवें अध्याय के आधे श्लोक को सुनतेही वह ताड़का वृक्ष उसी समय ताड़ रूप को छो ड़कर श्रेष्ठ ब्राह्मण होजाता भया और शीघ्र उसकी आत्मा शुद्ध होगई और वह स्त्री पु-रुष ब्रह्म राक्षस भी मुक्त होगये । अकस्मा-त् गीता के आठवें अध्याय का आधा श्लोक मुँहसे निकल आया जिससे वह तीनों मुक्त होगये । प्रथम तो वह स्त्री पुरुष ब्रह्मराक्षस

विमान में चढ़कर स्वर्ग को जाते भये और वह
भाव शर्मा जो ताड़ का वृक्ष हुआ था वह आ
धे श्लोक का जप करता हुआ ब्राह्मणरूप
काशीपुरी को गया और वहीं पर श्रेष्ठ तपस्या
करने लगा गीता के आठवें अध्याय के आधे
श्लोक का जप करते हुये उस भावशर्मा को
देख हे लक्ष्मी ! मैं ने वहां जाकर उत्तम वर
दिया कि जिसके प्रभाव से वह भाव शर्मा य-

हांपर सुखको पाय अन्तसमय मुझको प्राप्त भया यानी उसने भी मोक्ष को पाया हे प्रिये! यह गीता के आठवें अध्याय का महात्म्य है सो हमने तुमसे वर्णन किया कि जिसके पढ़ने और सुनने से मेरे में उसको भक्ति होतीहै।

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीश्वर सम्वादे गीतायां अष्टमाऽध्याय माहात्म्य समाप्तम् ॥ ८ ॥

अथ गीता का नवम अध्याय प्रारम्भः।

श्री कृष्णचन्द्र भगवान ने कहाकि यह गु-

प्तसे भी गुप्त भेद ज्ञान विज्ञान समेत तुमसे कहता हूँ जिसको जानकर प्राणीमात्र जन्म मरण के वन्धन से छूट जावैंगे तिसको तुम जानों जोकि समस्त विद्या का राजा और सब भेदों का राजा अत्यन्त पवित्र जिसका फल प्रत्यक्ष है और धर्मरूप अविनाशी और पूर्वक करने के योग्य है। हे परंतप! (काम क्रोध राग द्वेष अभिमानादिक शत्रुओं के

नाश करनेवाले) अर्जुन ! इस धर्म में विना
श्रद्धा के धारण किये हुये पुरुष मुझको विना
प्राप्त किये मृत्युरूपी संसार में जो जन्म म-
रणका घरहै इसमें भटका करतेहैं यानी विना
मेरा भजन किये प्राणी इस मृत्यु लोकमें बा
रम्बार जन्म लेते हैं और उनका आवागमन
छूटता नहीं है यह समस्त जगत मुझमें और
मैं इस जगत में व्याप्त हूँ तिस पर भी सब

जगत् मेरे में रहता है और मैं उसमें नहीं रह-
ता । मेरे योगके ऐश्वर्यको देखो यह सब सृ-
ष्टि मुझमें नहीं रहती और मैं सबको उत्पन्न
करता हूँ पालन करता हूँ परन्तु मेरामन उ-
नमें बँधा नहीं है जैसे-आकाश में रहने वाली
वायु सदैव समस्त संसार में सर्वत्र भरी है उ-
सी तरह सब जगत मुझमें रहता है इसको
तुम भली भांति जानो । हे कौन्तेय ! ब्रह्मा

के सन्ध्या समय में सब जगत् मेरी माया में लय होजाता है और ब्रह्मा के दिन के आदि में मैं उन सबको उत्पन्न करता हूँ। माया और जो पदार्थ है माया सब में है जीवादिक सब अपने वश में नहीं है और परमेश्वर सदा निराला है जैसे जगत् के पहिले लिप्त नहीं था वैसेही जगत् के नाश में भी निराला है। हे अर्जुन! माया को अंगीकार करके सम्पूर्ण

जगत को जो अपनी अपनी प्रारब्ध के वश में है उसको माया की शक्ति द्वारा वारम्बार उत्पन्न करता हूँ यहां पर श्री कृष्णचन्द्र ने यह सिद्ध किया कि जो चौथे अध्याय में कहा कि हम तुम और यह सब राजा लोग क्या पहिले नहीं रहे और क्या फिर न होगें सिद्धान्त यह है कि सब जगत माया के आधीन है और माया परमेश्वर के आधीन है। हे धनं

अ० ९

१९२

जय ! वह कर्म मुझको बन्धन नहीं करते का रण कि मैं तो उन कर्मों में उदासीन की भाँ- ति रहता हूँ और रहते हुये भी मेरा मन उन कर्मों में आसक्त नहीं है। अभिप्राय यह कि ममता से सब लोगों का बन्धन होता है और मैं उस माया के कर्मों में व माया में रह- ते हुये भी ममता नहीं करता हूँ इसी वास्ते मेरा उनसे बन्धन नही होती है। मुझको व

बनाकर अथवा मेरी प्रेरणा से माया सभी च
राचर जगत को उत्पन्न करती है इसी कारण
हे कौन्तेय ! यह जगत बारम्बार जन्म लेता
है और बारम्बार मरता है । जगत का महा-
प्रभु मैं ने जो भक्तों के हेतु मनुष्य रूप धरा
है इस कारण अज्ञानी लोग मुझको दुःखी
और सुखी समझते हैं मेरी महिमा को जो मैं
सब भूतों का परमेश्वर हूँ नहीं जानते । जि-

नका मन डाँवाडोल (संदेह भरी आशा) है
निरर्थक कर्मवाले फल रहित जिनकी विद्या
है जिनका ध्यान भी झूठा है जिनका चित्त
भ्रम में पड़ा रहता है राक्षस और असुरों की
प्रकृति जो मोहमें डालने वालीहै उसका नि
र्बुद्धिजन आसरा करतेहैं यानी जो और देव
तों से (असुरादि से) कामना होनेकी आशा
रखते हैं उनकी आशा निपट छोटी और व्य

र्थ है उनके कर्म भी निष्फल होते हैं शास्त्र पढ़ कर जो उसके अनुकूल कर्म नहीं करते और विना प्रयोजन वादा विवाद में लगे रहते हैं उनकी विद्या भी सार्थक नहीं है वह लोग असुरों का स्वभाव अर्थात् दुःख देना और भोग की इच्छा और अहंकारी स्वभाव जो बुद्धि नाश करने वाली है उसी के आसरे पर रहते हैं उनको हे अर्जुन! निरे मूर्ख जानो। हे पार्थ!

२०४

१८७

महात्मा लोग देवताओं के स्वाभाव का आ-
सरा करके अनन्यचित्त होकर मुझे जो सब-
का आदि कारण अविनाशी निश्चय और
प्रधान जानकर भजते हैं जो सदा हमारा की
र्तन करते हैं और दृढ़ व्रत होकर उपाय करते
हैं और भक्ति भावयुक्त प्रणाम करते हैं
और मन मेरे में लगाकर सदैव मेरीही पूजा
करते हैं कोई ज्ञान यज्ञ के द्वारा उपासना औ

र यज्ञ करते हैं अद्वैत भाव अथवा द्वैतभाव से
मेरा मुख सभी ओर को सदैव रहता है । मैं
ऋतु मैं यज्ञ मैं श्राद्ध मैं औषध और मैं ही
मंत्र मैं ही घी मैं ही अग्नि और मैं हीं होम
करने के पदार्थ हूं । इस जगत का पिता मा-
ता और कर्म का फलदाता और सबका पिता
मह (दादा) जानने के योग्य पवित्रों से प-
वित्र और ॐकार सामवेदादि चारों वेद मैं

हीं हूँ । उत्तमगति रूप सबका पालन करने वाला दयाका समुद्र सबका साक्षी सभीके सुखका स्थान समस्त जगत के शरण की जगह सच्चामित्र सम्पूर्ण चराचर का उत्पन्न करने वाला नाश करने वाला वासकी जगह और मुक्तिरूप जगत का बीज अविनाशी मैं हूं । हे अर्जुन ! मैं गर्म करता हूं मैं बरसता हूँ मैं सोखता हूँ मैं गिरता हूँ जीवन और मृ-

त्यु, सत् और असत् हम हीं हैं । वेदपाठी तीनों वेदों का रूप मुझे जानकर सोमलता के पीने वाले, पापों से शुद्ध है आत्मा जिस- की ऐसे यज्ञवेत्ता देवतों की गति चाहने वा- ले यज्ञ द्वारा स्वर्ग की प्रार्थना करते हैं और उन यज्ञों के पुण्य प्रभाव से इन्द्रलोक में जाय देवतों के संग स्वर्ग के सुख को भोगते हैं परन्तु जिस समय उनका पुण्यक्षीण होता

२०१

है तो वह विशाल स्वर्गलोक के भोग और सुखों को भोगकर मृत्युलोक में आप जन्म लेते हैं और उन लोगों का आवागमन बना रहता है परन्तु जो लोग अनन्य भक्ति द्वारा ध्यान-पूर्वक मेरी उपासना करते हैं उनको योग और क्षेय मैं विधान करता हूँ। जो अन्य देवताओं के भक्त हैं और वह पूर्ण श्रद्धा से यज्ञादि करते हैं वह भी हे अर्जुन! विधि र-

अ०९

हित मेरे ही हित करते हैं। निश्चय पूर्वक भ-
ली भांति नहीं जानते वह वारम्वार इस अ-
सार संसार में आया जाया करते हैं। देवतों के
पूजने वाले देवताओं के मध्य पहुँचते हैं, पि-
तरों की श्रद्धा वाले पितरों में मिलते हैं, भू-
तों के उपासक भूतों में और मेरी भक्ति कर
ने वाले मुझे प्राप्त होते हैं। हे अर्जुन ! जो मेरा
भक्त मेरे ही में चित्त लगाये भक्ति भाव यु-

२०२

क्त फल, फूल, पत्ती जल जो कुछ मेरे अर्प-
ण करता है वह भक्त की दी हुई वस्तु मैं अति
प्रसन्नता से सुख पूर्वक भोजन करता हूँ इस
कारण हे कौन्तेय ! जो आप धर्म करते हैं
भोजन करते हैं हवन करते हैं दान करते हैं
तपस्या करते हैं वह सब मेरे अर्पण करो; ऐसा
करने से पाप और पुण्य के फल बन्धन से
छूट जाओगे और सन्यास योग में मन लगा-

ने से मुक्त होकर मुझमें मिल जाओगे। हे अर्जुन! यह सब जगत मुझको सम है न मेरा कोई वैरी है न कोई मेरा प्रिय है जो मुझे भक्ति से सेवा करते हैं वह मेरे में हैं और मैं भी उनमें हूँ। जो घोर पापी भी मेरे में चित्त लगाय अनन्य भक्ति से मेरा भजन करते हैं उनको मैं साधु ही जानता हूँ कारण कि उनका व्यापार अच्छा है इसी भांति यदि

२०४

२०५

उनका भजन चला जाय तो वह धर्मात्मा होकर नाश रहित शांति को पा जाता है हे कौन्तेय ! मेरा भक्त नाश नहीं होता है। हे पार्थ पापी ! योनिमें पड़े हुये स्त्री वैश्य शूद्र भी मेरा ही आसरा रखते हैं वह भी मुक्ति को पाते हैं फिर पवित्र ब्राह्मण लोग और राजऋषि लोग मेरे भक्त लोगों का कहना ही क्या है इससे हे अर्जुन ! नाशवान सुख की

इच्छा छोड़कर और इस मिथ्या (झूठा) जगत की अभिलाषा को छोड़कर मेरा भजन करो मुझमें मन लगाओ मेरी भक्ति करो मेरे ही हित यत्न करो मुझको ही प्रणाम करो मेरे ही में मन लगाकर अपने चित्त को मेरे ही साथ एकता करके मेरे ही में निश्चय मिल जाओगे ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सु कृष्णार्जुन सम्वादे राजविद्या
राजगुह्यनाम योगवर्णनं नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

अ०४

२०७

अथ गीता के नवम अध्याय का माहात्म्य ।

श्रीनारायणने लक्ष्मी प्रति कहा कि हे प्रिये ! जिस भांति श्रीमहादेवजी ने पार्वती से गीता के नवम अध्याय का माहात्म्य वर्णन किया है वही मैं वर्णन करता हूँ सो सुनो नर्मदा नदी के किनारे महिष्मती नाम नगरी है वहां पर माधव नामक एक ब्राह्मण वेद वेदाङ्ग के तत्व का जानने वाला अतिथियों का

उपकार करने वाला शुद्धि बुद्धि विद्या ही से
बहुत सा धन इकट्ठा करके भारी यज्ञ का प्रा
रम्भ करता भया उस यज्ञ में आलम्भन के
लिये एक बकरा लाया उसे स्नान करा के पू-
जन किया तो वह बकरा हँसकर बोला कि हे
ब्राह्मण ! इन यज्ञों से जो फल होता है वह ना
शवान फल है और कर्ता मोक्ष को नहीं पाता
यह शब्द बकरे का होते ही यज्ञ में बैठे हुये

३०६

२०८

सभी ब्राह्मण लोग विस्मय में प्राप्त हुये और यज्ञ कर्ता ब्राह्मण हाथ जोड़कर बोला कि आपकी जाति आत्मा और पूर्वजन्म का वृत्तान्त क्या है और किस कर्म से बकरे की योनि आपको मिली है तब वह बकरा बोला कि मैंने ब्राह्मण के निर्मल वंश में उत्पन्न होकर अनेक यज्ञ किया। एक समय हमारी स्त्री ने पुत्रके रोग शान्ति के लिये देवीजी की

भक्ति से बकरा मँगाकर कटाना चाहा तो व
हीं पर उस बकरे की माता थी उसने जो देखा
कि मेरे पुत्र को यह लोग बलि देना चाहते हैं
तो मुझे शाप देती भई कि रे पापी ! ब्राह्मण-
णों में अधम ! जो तू मेरे पुत्र को मारना चा
हता है तो तू भी बकरा की योनिको पावेगा
इस शापका हमने ख्याल नहीं किया और
उस बकरे का बलि प्रदान किया । तब काल

अ० ६

२११

पाकर मेरी मृत्यु हुई और अनेक प्रकार की
योनियों में भटकता हुआ अब बकरा हुआ
हूँ और पशुकी योनि में भी मुझे पूर्व जन्म
का हाल स्मर्ण है तब तो यह हाल सुनकर
माधव नामक ब्राह्मण ने उस बकरासे अन्य
योनि में जो वह घूमा उसका भी हाल पूंछा
तो बकरे ने अपनी अन्य योनि का भी हाल
कहा कि बकरा की योनि छोड़कर मैं बन्दर

हुआ जो नाचता रहा बाद कुत्ता हुआ जो घ- ह०६
र घर में सदैव घूमता रहा एक समय निज
स्वामी की रसोइयां मैंने खराब कर दिया तो
ऐसा मारा गया कि मेरी मृत्यु हो गई और
घोड़ा का जन्म मुझे मिला वहां पर अनेक दु
ख उठाकर जो मरा तो फिर भी घोड़ा ही हु-
आ मेरा मालिक तीर्थ यात्रा के लिये जाने ११३
लगा तो मुझे दूसरे के हाथ बेंच दिया उसने

मुझे पेट भर खानेको नहीं दिया एक दिन ज
ल पिलाने एक तालाबमें लेगया तो वहां मैं
कीचड़ में फँस गया मेरे मालिक ने मेरे नि-
कालने के लिये अनेक यत्न किये परन्तु मैं
नहीं निकल सका और मेरी मृत्यु वहीं पर
होगई इस भांति अनेक प्रकार की यातना औ
र दुःख भोगकर अब मैं फिर बकरा हुआ हूँ
सो तुम मुझे इस यज्ञमें बलिप्रदान करदो तो

मेरे पूर्व जन्म के सब पाप दूर होजावैं मैने कु
रुक्षेत्र में एक राजा को काल पुरुष दान कर-
ते समय गीता के नवम अध्याय को सुना है
उसके प्रभाव से मेरी मुक्ति हो जावेगी । तब
ब्राह्मणी ने उस बकरे से पूछा कि तुमने ऐसी
घोर योनि में जा जाकर किस यत्नसे उसको
निर्वाह किया तब तो बकरा बोला कि हे ब्रा-
ह्मणी ! जिस समय से हमने गीता का नव-

म अध्याय सुना है तभी से उसीका स्मरण क
रता और उसी ध्यान में मग्न होकर मेरा दुः
ख भयसमय पार होगया अब मोक्ष का सम
य है यह हाल जानकर माधव ब्राह्मण ने
भी बकरे से गीता के नवम अध्याय को सुना
और वह बकरा समय पाकर मृत्युको प्राप्त
हुआ तो वह विमान में चढ़कर स्वर्ग को गया
और वह माधव ब्राह्मण भी गीताके नवम

अध्याय का पाठ करता रहा कि जिसके प्र-
भाव से उस ब्राह्मण की मुक्ति हो गई हे ल-
क्ष्मी ! यह गीता के नवम अध्याय का माहा
त्म्य हमने तुम से वर्णन किया कि जिसको
सुनकर व पढ़कर सभी जीव मुक्ति को पावेंगे।

इति श्रीपद्मपुराणे सतीश्वर सम्वादे उत्तरखण्डे गीतायां
नवमऽध्याय महात्म्य समप्तम् ॥ ९ ॥

अथ गीता का दशम अध्याय प्रारम्भः ।

श्रीकृष्णचन्द्र जीने अर्जुन से कहा कि हे

महाबाहो ! जो तुम हमारी बातों को सुन-
कर अति प्रसन्न होते हो इस लिये मैं तुमसे-
अपने परम वचन को कहता हूँ उसे ध्यान
से सुनो। हमारे औतारों को सब देवतों के स
मूह नहीं जानते और बड़े बड़े ऋषि लोग भी
नहीं जानते। मैं समस्त देवता और ऋषियों
का आदि कारण हूं जो मुझको जन्म रहित
सब जगत का आदि ईश्वर जानते हैं वही म-

नुष्यों में बुद्धिमान् है और वही सब पापों से छूट जाता है। बुद्धि आत्मज्ञान चैतन्यता क्षमा सत्यबोलना सम सुख दुःख जन्म मर णा भय अभय अहिंसा संतोष तपस्या यश अयश यह बातें सभी जीवों को होती हैं पर-न्तु उस बातों में जिन मनुष्यों की बुद्धि भ्र-मित नहीं होती और सुख दुख एक समान जानता है उसीकी बुद्धि उत्तम है। हे अर्जु

अ०१०

२१६

न ! मुझसे अलग सात मरीचि १ अत्रि २ अं-
गिरा ३ पुलह ४ क्रतु ५ अचेता ६ कश्यप ७ मह
र्षि और उनसे पहिले चार सनक १ सनन्दन २
सनातन ३ सनत्कुमार ४ यह चार मुनि हैं औ
र स्वयंभू १ स्वारोचिप २ उत्तम ३ रैवत ४ चाक्षु
ष ५ वैवस्वत ६ सावर्णी ७ दक्षसावर्णी ८ धर्म-
सावर्णी ९ रुद्रसावर्णी १० ब्रह्मसावर्णी ११
देवसावर्णी १२ सावर्णी १३ तामस १४ यह

मनु मेरे मनके संकल्प से उत्पन्न हुये हैं कि
जिनसे चौदह लोक देव असुर मनुष्य पशु
पक्षी आदि सभी उत्पन्न हुये हैं जो मेरी इस
पुनीत विभूति और योगको अचल जानता
है वही मेरे अचल ज्ञानको निस्संदेह पाता है
मैं सबका सृष्टिकर्ता और मुझसे ही सब प्रका
श हुआ ऐसा जानकर बुद्धिमान लोग सच्चे
भाव से मेरा भजन करते हैं मुझसे चित्त ल-

गाये हुये और मेरे ही में प्राणको लगाये हुये
आपस में समझते और समझाते हैं और मेरी
ही कथा कहते हैं उसीमें मनको सन्तोष क-
रते हैं उनको मैं शुद्ध बुद्धि देता हूं कि जि-
सके द्वारा वह मुझे पाते हैं और उनके हृदय में
अज्ञान रूपी जो अन्धकार है उसको ज्ञान
रूपी दीपकसे प्रकाश करके नाश कर देता
हूँ यह सुन अर्जुन ने कहा कि हे सर्वव्यापी !

आप सबके आदि कारण हैं आपके माहा-
त्म्य और कर्तव्य को कोई नहीं जानता यह
मैं सत्य मानता हूँ कारण कि आप आपही
को भली भांति जान सक्ते हैं जिन जिन वि-
भूति से इस लोक में आप व्यापक और वि-
राजमान हो रहे हैं उन प्रकाशमान अपनी
विभूतिनों को आपही वर्णन कर सक्ते हैं। हे
योगेश्वर! आपका सदा ध्यान करते हुये मु

को यह बताइये कि किस किस पदार्थ में आप का ध्यान करना चाहिये सो मुझ प्रति दया करके वर्णन करिये ?। श्रीकृष्णचन्द्र जीने कहा कि हे अर्जुन ! अपनी विभूतियों को प्रधान करके मैं वर्णन करता हूं और मेरे विस्तार का तो अन्त नहीं है। हे गुडाकेश अर्जुन ! मैं आत्मा हूँ और सब जीवों के हृदय में रहता हूँ मैं सब जगत का आदि मध्य और

अन्त भी हूँ। अदिति के पुत्रों में मैं विष्णु हूँ ज्योतिवालों (प्रकाशमान) के मध्य कि रणधारी सूर्य समस्त वायु के मध्य मरीचि मैं हूँ और नक्षत्रों में चन्द्रमा मैं ही हूँ वेदों मे सा मवेद देवताओं में इन्द्र इन्द्रियों में मन सब प्राणियों में चेतना शक्ति मैं ही हूँ। रुद्रों में शंकर नाम रुद्र यक्षराक्षसों में कुवेर आठों वसुओं में अग्नि पर्वतों में सुमेरु मैं ही हूँ। पुरो

२०१०

२२५

हितों में बृहस्पति सेनापतियों में स्कन्ध स-
रोवरों में समुद्र मैं हूँ। ऋषियों में भृगु शब्दों
में प्रणव सब यज्ञों में जप यज्ञ पर्वतों में हि-
मालय मैं हूं। सब वृक्षों के मध्य पीपल वृक्ष
देवऋषियों में नारद गन्धर्वों में चित्ररथ सि-
द्धों में कपिल मुनि मैं हूं। घोड़ों में उच्चैश्रवा
हाथियोंमें ऐरावत और मनुष्यों में नरपति
हूँ। हथियारों में बज्र गौओं में कामधेनु वंश

बढ़ाने वालों में कामदेव सर्पों में बासुकीना-
ग मैं ही हूँ । नागों में शेषनाग जल के जीवों
में वरुण पितरों में आर्यमा दण्ड देनेवालों
में यमराज मैं हूँ । दैत्यों में प्रहलाद गिनती
करने वालों में काल (समय) पशुओं में
सिंह पक्षियों में गरुड मैं हूँ । तेज से चलने
वालों में वायु शूरवीरों में श्रीरामचन्द्रजी म-
छलियों में मगर नदियों में गंगा मैं हूँ । हे अ

र्जुन सब जगत का आदि मध्य और अंतभी मैं ही हूँ । समस्त विद्याओं में वेदान्त विद्या वादविवाद में सिद्धान्तरूप मैं ही हूँ । अक्षरों में अकार समास के पदों में द्वन्द समास नाश न होने वालों में काल मैं हूँ । कर्मोंका फल दाता ईश्वर मैं हूँ । सब ओर मुख मेरा है सब संसार को मैं ही देखता हूँ । सबके हरनेवाली मौत मैंही हूँ । होनहा-

र पदार्थों में उत्पत्ति यश और लक्ष्मी सरस्व
ती बुद्धि धारणाशक्ति सहनशीलता मैं हूँ ।
सामवेद की ऋचाओं में बृहत् साम छन्दों
में गायत्री छन्द बारह महीनों में अगहन ऋ
तुओं में वसन्त मैं हूँ । छलियों में जुवा तेज-
वालों मे तेज सब काम मे परिश्रम सतोगुणी
पुरुषों मे सतोगुण मैं हूँ । यदुवंशियों में वा-
सुदेव पाण्डवों में अर्जुन मुनियों में व्यास

कवीश्वरों में शुक्राचार्य दण्ड देनेवालों में शासन जयकी इच्छा करने वालों में नीति मनके भेदों में चुप (शान्त) ज्ञानियों में आत्मज्ञान मैं हूँ । जो संसार की मूल वस्तु है सो हे अर्जुन ! मैंही हूँ । इस चराचर जगत में जो पदार्थ मेरे बिना है वह तो पदार्थ ही नहीं है । हे अर्जुन ! मेरी दिव्य विभूति का अन्त नहीं है यह तो मैंने तुमसे अपनी विभू-

ति शूक्ष्म (संक्षेप) मैं कही है जो जो राज
सी लक्ष्मी सम्पत्ति सब प्रकार की शोभा है ब-
ह सब मेरेही तेजके अंशसे उत्पन्न होकर प्र
काशित है और इतनी सभी विभूतियां मेरे
हे अर्जुन ! अंगोमें विराजमान है जो कि
मेरे एक एक अंशसे प्रकाशित है ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्ण
अर्जुन संवादे विभूतियोगवर्णनं दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥

अथ गीताके दशवें अध्यायका माहात्म्य ।

श्रीपार्वतीजी बोली कि हे ईशान ! हे वि-
रूपाक्ष ! अब आप मुझपर कृपा करके गी-
ताके दशवें अध्याय का माहात्म्य मुझसे क
हिये । तब श्री महादेवजीने कहा कि हे पार्व
ती ! इस गीता के दशवें अध्याय के माहा-
त्म्यकी अनेक कथायें हैं उन कथाओं में से
मैं एक का वर्णन करता हूँ सो सुनो । श्रीका-

शीपुर में एक ब्राह्मण शान्तचित्त हिंसा र-
हित साहसी जितेन्द्रिय रहता था कि जिस-
पर मैं प्रसन्न होकर अपना हाथ प्रीतिपूर्वक
देतासया । एक समय हमारे यहां विभना-
मुनि आचमन करके नाकके अग्र भागमें ह
ष्टिको लगाये परमानन्द के भजनमें मग्न म
व इन्द्रियोंको वशमें किये द्वारका देहली में
शिर धरकर रात्रिमें निःशंक सोगया तब तो

५०१०

२३२

हमारा गया भृंगीरिषी हमारे चरणोंको नम
स्कार करके हमसे पूछने लगा कि हे प्रभु!
इस विधिसे किसने आपके दर्शन किये हैं इ-
स माहात्मा ने तपस्या हवन और क्या जप
किया है कि जिसका आप प्रतिपद में हाथ
का अवलम्बन देते हैं यहां से यह किस हेतु
नहीं जाता यह वृत्त आपसे जानने की इच्छा
करता हूँ। इस भांति भृंगी रिषि के बचन सु-

नकर श्रीमहादेवजीने कहा कि हे भृंगीरिषी
किसी समय पुन्नागों के वन के समीप कैला
स में हम थे वह वन अनेक वनकी शोभाओं
से युक्त अत्यन्त रमणीक था वहीं पर क्षण
मात्र हम स्थित होगये तो वायु बडे वेगसे च-
ली और काली काली छाया मुझे देख पडी
और महा घोर शब्द हुआ साथही एक पक्षी
आकाश से उतरता देखपडा जो कि महाकी

ला अन्धकार के तुल्य परवने कटे हुये पर्वत की नाईं पृथ्वीपर आकर मेरेको नमस्कार करने लगा और कुछ कमल मेरे चरणों में रखकर मेरी अनेक भांति से स्तुति करने लगा जब उसने अनेक प्रकार से स्तुति किया और मैंने पक्षी कृत स्तोत्र को सुना तबतो मैंने उससे पूछा कि हे पक्षी ! तुम कौन और कहाँ के रहने वाले हो तुह्मारी तो देह हंस के समान

श्रौर रंग कौवे के तुल्य है किस प्रयोजन से
यहां पर आये हौ सो सब कहिये ? । इस प्रका
र जब मैंने उससे पूछा तब वह पक्षी हाथ जो
ड़कर नमस्कार करते हुये बोला कि हे धूर्ज-
टि ! मैं ब्रह्मा जीका हंस हूँ एक समय मान-
सरोवर से मैं पृथ्वी पर आया तो बड़े संकट में
पड़ा वह यह कि सौराष्ट्र नगर में एक तालाब
में कमल फूल रहे थे तो मैं उस तालाब से कु-

मूल नाल को उखाड़ कर तेजी से आकाश को जाने लगा आकस्मात मैं पृथ्वी में गिरपड़ा और मुझे मुर्छा आगई, देह कांपने लगी कुछ देर के बाद जब मुझे चेत आई तो मेरी देह काली पड़गई थी उसे देखकर बड़ा-ही आश्चर्य जान मैं विचार करने लगा कि इसका क्या कारण है उसी तालब के कमलों मेंसे शब्द मुझे सुनाई दिया कि हे हंस ! सचे

त हों तुम्हारे गिरने और काले होजाने का
कारण सुनो ! तब मैं उठकर उस तालाब के
निकट आया तो क्या देखता हूँ कि पांच कम-
लों से युक्त एक कामलनी देखी तो आश्च-
र्य में प्राप्त होकर मैंने अपने गिरने और का-
ले होने का कारण पूछना प्रारंभ किया कि उ
सी समय साठि हजार देवता लोग आकाश
में स्थित पिताम्बर धारण किये मुझे देख पड़े

तब मुझे बड़ाही आश्चर्य हुआ और कमलि-
नी को नमस्कार करके हे प्रभु मैंने उक्त का-
रण पूंछा तो कमलिनी ने कहा कि हे कलहं-
स ! तुम हम को नांघ कर पराक्रम युक्त आ-
काश को उड़े थे इसी कारण आकाश से गि-
रपड़े और शरीर में कालापन दिखाई देता है।
आपको गिरे देखकर यह आकाश में स्थित
साठि हजार देवगण आपको देखने और ता

लाव की सुगन्धि के लिये आये हैं यह लोग सातवें बीते हुये जन्म में मुनि के पुत्र थे जो-कि इसी तालाब के निकट श्रेष्ठ तपस्या करते थे कि एक स्त्री पूर्ण शृंगार किये युवावस्था में सम्पन्न नाच गान करती हुई मुसक्यान और हाव भाव कटाक्ष से युक्त यहां आई उसका गान सुनकर यह सभी लोग हिरण की नाईं झट उठकर उसे देखने लगे और उस

अ०१०

२४१

स्त्री के लिये कोई कहे हमने प्रथम देखा है हमारी है यह कह कर आपस में मुष्टि युद्ध करने लगे और लड़कर सबके सब यहीं पर मर गये और घोर नर्कमें जाकर अनेक प्रकार की यातनाओं को भोगकर पृथ्वीमें सारस होगये तो वनकी अग्निसे पक्षियों को जला कर नाश करने लगे बाद कुछ समय के मरने पर हाथी की योनी में गये तो मार्ग में चलने

वालों को कष्ट देनेलगे एक समय वर्षाऋतु
आई और जलवर्षा यह सब उस जंगलके ज
लको जो घास पत्तों से सड़ा था पीगये और
सब के सब मृत्यु को प्राप्तहुये फिर नर्क में
जाकर नर्क के दुःख भोगकर गधा ऊंठ वानर
(बाँदर) की योनि क्रम से जन्म लेते मरते
हुये अब भँवरा की योनि में उत्पन्न होकर
इस तालाब में वर्तमान हुये और इस ताला-

व की सुगन्धि को सूंघकर यह सब मृत्युको प्राप्त होनेबाद वैष्णव पदको प्राप्त हुये हैं। हे हंस ! मेरा वृत्तान्त सुनो इस जन्मके पहिले तीसरे जन्म में सरोजबदना नामकी ब्राह्मणी की मैं कन्या हुई थी जो सदैव पतिकी सेवा करने में तत्पर गुरू और अपने बड़ोंकी सेवा सदा किया करती थी। किसी समय मैं ने एक सुवा (सारिका) का पालन किया

और मैं उसे पढ़ाया करती थी एकदिन मेरे पतिने क्रोधकर के मुझे शाप दिया कि हे पापे ! तू सारिका होजा तब मैं मरकर सारिका होगई । पूर्व जन्मके पतिव्रता धर्म के प्रभाव से मुनियों के स्थान में मुझे वास मिला और एक मुनि कन्या मेरी पालना करती भई वहीं पर ब्राह्मण लोग प्रातःकाल उठकर गीता के दशवें अध्याय का पाठ किया करते थे उसे

मैं नित्य सुना करूं और सारिका का शरीर छोड़कर गीताके दशवें अध्याय के सुनने के प्रभाव से अकाश में पद्मावती के नामकी प्रसिद्ध अप्सरा हुई एक समय विमान में चढकर जो मैं चली तो यह मुझे उत्तम तालाब देखपड़ा तो मैं विमान से उतर कर इस तालाब में जल क्रीड़ा करने लगी उसी समय दुर्वासा मुनि इधर आते हुये दिखाई दि

ये उन्हे देखकर और शापके भयसे मैंने क-
मलिनी का रूप धर लिया दोनों पावोंसे दो
कमल हाथोंसे दो कमल और मुख में एक
कमल धारण करके छिपगई परन्तु दुर्वासा
जीने देखही लिया और शाप देदिया कि जो
तूने पांच कमलों को एक में जोड़कर एकत्र
किया है और जल में नग्न स्नान जल क्रीड़ा
कर रही है इस पापसे एकसौ वर्ष इसी भांति

स्थित रहु यह शाप देकर दुर्वासा तो चले ग-
ये और मैंने जो गीताका दशवाँ अध्याय सु-
नाथा उसके प्रभावसे मेरी वाणी नष्ट नहीं हु
ई हे हंस ! यह मेरा पूर्व जन्म का हाल है जो
तुम मुझको नांघकर चले इसी कारण गिर-
पड़े हो और देह में कालापन छागया है अब
तुम इस उत्तम गीता के दशवें अध्याय को
सुनो जिससे आपकी मुक्ति होवेगी और आ

पके कारण से मैं श्री दुर्वासा के शाप से छुट्टी पाऊंगी । यह कह कमलिनी ने गीता के दशवें अध्याय का पाठ करना प्रारम्भ किया । हंस गीता के दशवें अध्याय को सुनकर शुद्ध भावसे श्री शंकरजीके सामने शरीर को छोड़ कर मुक्त होगया । यह कथा श्रीमहादेवजी से भृंगीरीपिगणा सुनकर बोले कि हे प्रभु ! यह हंस पूर्व जन्म का कौन था और ब्रह्माजी

अ०१०

का हंस कैसे हुआ आपके आगे किस प्रयोज
से शरीर का त्यागन किया ?। यह सुन म-
हादेव जी ने कहा कि हे भृंगीरीटि ! यह पूर्व
जन्म में ब्राह्मण वंश में उत्पन्न सुतपा ना-
म से प्रसिद्ध था जो ब्रह्मचर्य व्रतको धार-
ण किये गुरू के यहां रहता था आकस्मात्
एक दिन निद्रा से व्याकुल गुरूजी की शय्या
इसने पांवसे छूलिया उसी पापसे यह स्वर्ग

मैं भी जाकर पक्षीकी योनि पाया और हंसों
के मध्य पद्मयोनि हंस हुआ । अब यह मेरे
सामने मृत्यु को पाया और कमलिनी से गी
ता के दशवें अध्याय को सुनकर ब्रह्मज्ञान
को प्राप्त भया तो उस जन्म के गीताऽभ्या-
स से यह उत्तम गति को प्राप्त भया है वही
यह हे गणा ! ब्राह्मणा है जो मेरे द्वारपर स्थि-
त है इसको मैं अपने हाथ से कभी कभी स्पर्श

करता हूं और इसको बाहर नहीं जाने देता कारण कि इसने गीता के दशवें अध्याय को सुनकर दुर्लभ तत्व ज्ञान और जीवन मुक्ति को प्राप्त किया है। हे भृंगिरिषि ! यह गीता के दशवें अध्याय का माहात्म्य है समस्त पापों के नाश करने वाली इस कथाको जो सुने व सुनावेगा वह सब प्रकार के फल को पावेगा।

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संवादे श्रीगीतायां महात्म्यं दशमोऽध्यायः समप्तम् १०

अथ गीता एकादशोऽध्यायः प्रारम्भः ।

श्रीकृष्णचन्द्रजी से यह अध्यात्म योग सुनकर अर्जुन ने कहा कि हे कृष्ण ! आपसे यह अध्यात्म योग को सुनकर मेरा भ्रम था वह दूर होगया हे कमलपत्राक्ष ! भगवान् समस्त जगत की और नाश विस्तार पूर्वक हमनें आपसे सुना परन्तु जैसी विभूति अपने को आपने वर्णन किया कि सब में हम और सब ह

में स्थित हैं सो मुझपर दया करके वह रूप दि
खाइये कि जो समस्त जगत् आपमें विराज-
मान है हे पुरुषोत्तम हे प्रभु ! योगियों के भी
ईश्वर आप जो मुझे उस अविनाशी पुरुष के
देखने योग्य समझते हों तो उस विश्व रूप
को मुझे दिखाइये । यह प्रार्थना अर्जुन की
सुनकर श्रीकृष्णचन्द्रजी ने कहा कि हे पार्थ !
सैकड़ों और हजारों भांति के मेरे स्वरूपों को

देखो जो चित्र विचित्र अनेक रंगों से प्रकाश- | अ०११
मान है हे भारत ! बारहों सूर्य आठौंवसु ग्या-
रहों रुद्र दोनों अश्विनी कुमार उन्चासों वायु
इन सबको मुझमें देखो कि जिस आश्चर्यको
कभी आपने न देखा होगा । हे गुडाकेश ! अ-
र्जुन इसी जगह मेरी देह में जंगम स्थावर स-
म्पूर्ण जगतको और जो कुछ देखने की इच्छा | २५५
करते हो वह भी अभी देखलो परन्तु तुम इस

नेत्रों से उस विश्वरूप को नहीं देख सक्ते इस कारण मैं तुमको दिव्य दृष्टि देता हूँ उनसे मेरे योग और ऐश्वर्य को देखिये । श्रीसंजयने धृतराष्ट्र से कहा कि हे राजन् ! इस भांति योगेश्वर श्रीकृष्णचन्द्रने अर्जुन प्रति ऐसा कहकर परम ऐश्वर्यमान विराटरूप को दिखलाया कि जिस रूपका वर्णन किसी भी देवादिसे न किया जा सके कि जिसमें अनेक मुख अनेक

नेत्र अनेक बाहु कि जिनमें अनेक चमकते हुये हथियार उठाये मारने के लिये उद्यत धारण किये यदि किसी समय हजारों सूर्य एक साथ उदय होवें तो शायद वैसा प्रकाश होवे या न होवे इस भांति देदीप्यमान विराट्‌रूप श्रीकृष्णचन्द्र भगवान का प्रकाशित हुआ रूप कि जिनके शरीर में सभी देवता गण अपनी अपनी मण्डली के साथ उस दिव्य-

मान स्वरूप में स्थित ह ऐसी आश्चर्यम
ई मूर्ति को देखकर जो बड़ी व्याकुलता में
भरे हुये थे उस अर्जुन ने शिर झुकाकर न
मस्कार किया और हाथ जोड़कर प्रार्थना
करने लगे कि हे प्रभु ! आपके दिव्य रूप
में समस्त देवतों को उसी तरह कार्यक्रम करते
हुये देख रहा हूं। जगत के पितामह (दादा)
ब्रह्मा जो कमलासन पर स्थित समस्त ऋ-

पिगण और समस्त तेजधारी सर्पगण भी
स्थित हैं । अनगिनती आपके रूप में भुजा
पेट मुख नेत्र युक्त आपको देखता हूं साथही
आपके इस दिव्यरूप का आदि मध्य अन्त
भी नहीं दिखाई पड़ता कि कहां से कहां तक
है हे विभु ! इस समय तो आपका यह दिव्य
रूप जगतरूप (विराटरूप) है कि जिसमें
किरीट धारण किये गदा और चक्र हाथों में

लिये तेजके पुञ्ज चारों ओर प्रकाशमान अ-
ति कठिनाई से देखने योग्य दिखाई देते हैं
कि जिस रूप में बलती हुई अग्नि और अन
न्त सूर्यका प्रकाश हो रहा है कि जिसका दे-
खना नेत्रों से तो हो ही नहीं सकता परन्तु म-
न और बुद्धि भी देखने और अनुमान कर
ने में असमर्थ है इस भांति सब दिशाओं मे
व्याप्त आपको देख रहा हूं । आप नाश र-

हित सबसे महान् जानने के योग्य हैं और आ
पही इस समस्त जगत के निवास का स्थान
और अविनाशी सदा स्थिर धर्म की रक्षा कर
ने वाले पुरुषोत्तम मेरी मति में हो आदि म-
ध्य अन्त से रहित अप्रमाण शक्ति अत्यन्त
तेजवान् अनन्त बाहुयुक्त चन्द्रमा और सूर्य

आपके नेत्र देख रहा हूं। आपके मुखसे घोर
अग्नि ज्वाला निकल रही है कि जिसके तेज

से समस्त जगतको भष्म करते हैं और प्रका
शित भी कर रहे हैं। हे परमेश्वर ! आकाश व
पाताल और भूतल अन्तरिक्ष सभी स्थान
आपके इस दिव्य रूपसे भरे हुये हैं हे महा
त्मन् ! आपके इस दिव्यरूप को देखकर ती
नो लोक भयभीत हो रहे हैं। देवता लोग आ
पकी शरण में त्राहि त्राहि कहते हुये स्तुति
कर रहे हैं ग्यारहों रुद्र बारहों सूर्य साध्य ना

मरुत देवता उञ्चासों वायु पितर लोग गन्धर्व असुर सिद्ध आपके इस दिव्य रूपको देख रहे हैं और सबकी बुद्धि चक्कर में आगई है। हे महाबाहो ! सामर्थ्यवान अनेक बड़ी बड़ी भुजाओं से युक्त अनेक मुख अनेक नेत्र अ संख्य जंघा अनगिनती चरण बहुत बड़ा पेट अत्यन्त भयानक तिरछी डाढें और दांतों से युक्त यह रूपको देखकर चौदहों लोक भय

२२

२६२

से व्याकुल हो रहे हैं हे विष्णु ! आकाश से
छुआ तेजधारी अनेक रंग विरंगा बड़ा भारी
मुख जिसमें से अग्निकी ज्वाला निकल रही
हैं बड़े बड़े नेत्रों से युक्त ऐसा यह आपका रू
प देखकर मेरी अन्तरात्मा मन व्याकुलतासे
दुखी होरहा है आपके परम भयानक नोक
दार बड़े बड़े दांत कालरूपी अग्नि के समान
देखते ही मुझे दिशाओंका भ्रम होगया है हे

जगन्निवास ! यह समस्त जगत आपमें वा-
स करता हुआ हम देखकर भयभीत होगये
हैं मुझपर कृपा करके अब आप प्रसन्न होइ
ये। यह सब धृतराष्ट्रके पुत्र और सब सेनाओं
सहित यह राजा लोग भीष्म पितामह द्रो-
णाचार्य कर्णा सेनासहित यह योधालोग आ
पके सब मुखोंमें बड़ी तेजीसे घसे चले जाते
हैं कोई तो डाढों में चपका है किसी किसीको

शिर चूर चूर दिखाई देता है जैसे नदियों का
बहुत बढ़ा हुआ जल समुद्रहीकी ओर तेजीसे
जाता है उसी भांति यहसब जगतके वीरलोग
आपके ज्वालाकार मुखमें घुसे चले जारहेहैं
जैसे भड़कती हुई अग्नि मे पतंगे अपने नाश
के लिये आपही चले जाते हैं वैसेही यह सब
लोकके मनुष्य अपने मरने के लिये आपके
मुखों में आपही घुसे चले जा रहे हैं। हे विष्णु

आप अपने अग्नि रूपी मुखों से सब जगत को चटनी की भांति स्वाद लेते हुये निगले जाते हो आपके तेजसे सब जगत भर गया है और बड़े कठोर तेजसे भस्म करते हो। अब आप मुझको यह बताइये कि आप भयानक रूप कौन हैं? हे देववर देवतों में श्रेष्ठ आप-को अनेक प्रकार से नमस्कार है। अब आप प्रसन्न होइये। आपको जानने की मेरी बड़ी

अ०११

२६७

इच्छा है । अर्जुन की स्तुति सुनकर श्री नारा
यण भगवान ने कहा कि मैं काल रूप हूं भू-
भार हरण करने में लगा हूं मैंने समस्त जग
त के नाश हेतु निश्चय किया है तुम्हारे को
छोड़कर इस सेना में जितने योधागण एकत्र
हुये हैं वह एक भी न बचेंगे इस हेतु तुम अप-
नी कायरता को छोड़कर इन सबसे निर्भय हो
कर युद्ध करो हे सव्यसाचिन् ! आप तो निमि

त्मात्र यानी अर्जुनने संग्रामसमें अमुक रा-
जाको मारा यह यशलेलो और राज्य लक्ष्मी
को भोग विलास करो। इन सबको मैंनेतो प्र
थमही मार रक्खा है। यह भीष्मपितामह द्रो
णाचार्य जयद्रथ कर्ण और भी लड़नेवाले
बड़ें२ वीरोंको जिनको तुम देखकर भयभीत
होते हो वह तो मेरे मारे हुये पड़े हैं इनसे डर-
ने का क्या कारण है इसका शोच न करिये

और इन सब को संग्राम में मार डालिये बड़ी प्रशन्नता के साथ युद्ध करो तुम इस लड़ाई में शत्रुओं को जीतोगे ! संजयने धृतराष्ट्र से कहा कि इस भांति भगवान के बचन सुनकर कांपते हुये दोनों हाथ जोडकर उस विराट रूप भगवान को नमस्कार करते हुये बडे भयसे दण्डवत करके घिघियाते हुये गले से डरते डरते अर्जुन फिर बोले कि हे हृषीकेश ! आप

की स्तुति से सब जगत जो प्रशन्न होता है औ
र प्रीति करता है वह योग्य है दिशाओं के भा
र रूप राक्षस आप के भयसे भागते हैं और
सिद्ध लोग आपको नमस्कार करते हैं यह स-
व उचितही है हे देवेश ! ब्रह्मादिक के भी आ-
दि कर्ता हे अनन्त ! जगत में व्यापक और अ
विनाशी हैं आप तो गुप्त और प्रत्यक्ष से परे
हैं। आप सब देवतों के आदि और जगत के

श०११

२७१

लयके स्थान सनातन पुराण पुरुष इस जगत
केनिवासका स्थान सर्वज्ञ सर्वत्र आप व्याप-
क हैं। वायु यम अग्नि वरुण चन्द्रमा प्रजाप
ति इन सबका आप रूप हैं आपको ६०
वार नमस्कार है नमस्कार है। आपके स-
न्मुख नमस्कार आपके पीठ पीछे नमस्का
र सबही देश मे आपको नमस्कार है अनन्त
सामर्थवान अनगिनती पराक्रमी सर्व व्याप-

क आपही हैं इसलिये आपको असंख्यश न
मस्कार है । आपको मित्र मान के जो ढिठा
ई से मैंने हे कृष्ण ! हे यादव ! हे सखा यह जो
कहा है सो आपकी महिमा बिना जाने उद्
मत्ततासे अथवा प्रीतिसे या हँसी में जो कुछ
आपका अनादर चलते फिरते सोते बैठते खा
ते पीते एकांतमें या लोगोंके सामने हुआ हो
उस को आप क्षमा कीजिये कारण कि आ-

ध्का महत्व और परम शक्ति प्रमाण से वा
हर है चर अचर रूप जगत के आप पिताहो
और जगत के आप पूज्यहो सब गुरू और
पितरों से बड़े हो जब तीनों लोक में आप से
कोई बड़ा नहीं है तो आपसे उत्तम कहां
से होगा आपका प्रभाव अप्रमाण है इस
कारण आपको अनेक (दण्डाकार गिर कर
के) नमस्कार है आपमेरे सभी अपराधोंको

क्षमा करिये जैसे पिता पुत्रके मित्र मित्र के

अपराध क्षमा करता है उसी नातेसे आप मेरे

अपराध क्षमा करने योग्य हो कृपया मेरे स-

भी अपराध क्षमा करिये। इस भांतिके रूप

को जो मैंने कभी भी नहीं देखा था उसे दे-

खकर मेरा हृदय अत्यन्त प्रसन्न है और म

हा भयसे मन मेरा व्याकुल भी है हे देव! अ

व आप मुझपर प्रशन्न होकर आपका जो

अ० ११

२७५

प्रथम रूपथा वही मुझे दिखाइये । हे सहस्र
बाहो ! प्रथम का वही चतुर्भुजी रूप मुझे दि
खाईये और मुझपर प्रशन्न होइये । इसभां
ति अर्जुन की स्तुति सुनकर श्री भगवान ने
कहा कि हे अर्जुन ! मैंने तुमपर बड़ी कृपा क
रके अपनी योगमाया से उत्तम ज्योति मय
विश्वरूप आदि अन्त से रहित तुमको दिखा
या कि जिसको तुमसे पहिले किसी दूसरे पु

रूप ने नहीं देखा है कुरुवीर ! न वेद पढ़ने से
न यज्ञ करने से न शास्त्र पढ़ने से न दान करने
से न अनेक भांति की क्रिया करने से न घोर
तप करने से ऐसा घोर रूप मेरा इस जगत में
तुम्हारे सिवाय दूसरा नहीं देख सक्ता है हे अ
र्जुन ! तुम भय न करो तुम मेरे इस विश्वरू
प को देखकर निर्भय हो जाओ और मेरे उस
प्रथम के रूपको चिन्तवन करो अब तुम उ-

सी रूप को देखोगे । संजयने धृतराष्ट्र से क
हा कि हे राजन् ! भगवान ने अर्जुन के प्रति
ऐसा कहकर अर्जुन के देखतेही देखते अप-
ना पूर्व रूप धारण करके अपनी मधुर मूर्ति
फिर कर लिया तब अर्जुन ने कहा कि हे ज-
नार्दन ! आपकी यह सुन्दर मानुषी मूरति
को देखकर मेरा मन प्रशन्न होगया है श्रीकृ
ष्णचन्द्र जी ने कहा कि हे अर्जुन ! इस मेरे

रूप का जिसका दर्शन बहुत क्लेश के योग्य
है उसको तुमने देखा इस रूपके दर्शन की दे
वता भी इच्छा किया करते हैं यह रूप किसी
भी यत्नसे नहीं दिखाई देता इसके देखने का
मुख्य साधन मेरी अनन्य भक्ति है कि जिस
के द्वारा इस रूप को मनुष्य देख सकता है औ
र मुझमें प्रवेश कर सकता है ! हे पाण्डव !
मेरे अर्थ कर्म करने वाला और मुझ पर ही

अ०११

२७६

आसरा रखने वाला मेरा भक्त फल की इच्छा रहित सबको एक समान समझने वाला जो होय वही मुझे पाता है ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्ण अर्जुन संवादे विश्वरूप दर्शन नाम एकादशोऽध्यायः समाप्तः ॥ ११ ॥

अथ गीता के ग्यारहवें अध्याय का माहात्म्य।

श्रीपार्वती जी के पूछने पर श्री दयालु शंकर गीताजीं के ग्यारहवें अध्याय का माहात्म्य वर्णन करने लगे कि हे पार्वती ! इस ग्या

रहवें अध्याय का माहात्म्य किसी प्रकार व-
र्णन योग्य नहीं है इस अध्याय के माहात्म्यमें
अनेक कथायें हैं उनमेंसे एक कथा मैं संक्षेप
में वर्णन करता हूं सो सुनो हे देवि ! प्रणीता
नदी के किनारे मेघंकर नामक पुर था कि जि
की शोभा अकथनीय है यहां तक कि उस
पुरको लोग दिक्पालों के वास का स्थान दि
व्य सम झते थे उसी में भगवान की मूर्तियां

विरायमान थी मानों स्वर्ग का एक ग्राम ही
है उसी मघंकर नगर में ब्राह्मणों में उत्तम वे-
दपाठी इन्द्रियों को अपने वेश में किये भग-
वद्भक्त सुनन्द नामक एक ब्राह्मणदेव रहते
थे जो सदैव गीताके ग्यारहवें अध्यायका पा
ठ किया करते कि जिसके प्रभाव से वह सुन-
न्द मुनि जो ब्रह्मज्ञान को प्राप्त होगये। एक
समय सिंहराशि का बृहस्पति होने से वह सु-

नन्दजी कुछ ब्राह्मणोंके साथ तीर्थ यात्रा को चल दिये और भूमण्डल के समस्त तीर्थों का दर्श स्पर्श दान धर्म करते हुये अकस्मात् एकदिन सायंकाल होजाने के कारण एक ग्राम में जाकर वास करने की इच्छा प्रगट किया उस ग्राम वासियों ने उस मुनि सुनन्द युक्त सभी ब्राह्मणों को कहीं ठहरने न दिया तब वह लोग लाचार होकर ग्रामसे बाहर

अ०११

२८३

निकलकर चलना चाहे तो ग्राम पालने उन-
उत्तम ब्राह्मणों को देखकर दया किया कि
कहा इन लोगों को जो ग्राम में राक्षस लग-
ता है न खाजावे यह विचार कर यह भेद
बताया नहीं परन्तु ठहरने का स्थान ग्राम के
भीतरही देदिया वह ब्राह्मण लोग रातभर
वहीं पर रहे प्रात होतेही जो चलने लगे तो दै-
दीप्यमान ब्राह्मणों को देखकर ग्राम पालने

फिर वास करनेकी प्रार्थना किया उस प्रार्थना
को स्वीकार करके वह ब्राह्मण लोग सुनन्द
सहित सात दिन वहीं रहगये । एक दिन ग्रा
म पालके पुत्र का मित्र बाहर से आया और
रात्री होजाने से ग्राम में प्रवेश नहीं कर सका
और वह ग्रामसे बाहर ही सो गया किसीके क
हने से ग्राम पाल के पुत्र ने जाना कि मेरा मि
त्र आया है और वह बाहरही रहगया है तब

राक्षस का भयमान वह तुरन्त अपने मित्र
को लेने उस स्थान पर गया तो क्या देखता है
कि उसके मित्र को तो राक्षस ने खालिया है
इसे आते देख इस ग्राम पाल के पुत्र को भी
पकड़ कर खागया । प्रात काल होतेही वह
ग्रामपाल रोता पीटता उन ब्राह्मणों के पास
जाकर अपना दुःख कहने लगा कि मेरी यह
गति हुई है यदि इसका कोई यत्न आप जान

ते हों तो करिये । सुनन्द जीने कहा कि हे ग्रा
म पाल ! वह राक्षस यहां कैसे आया और
किस हेतु ऐसा अत्याचार करता है और वह
कहता क्या है सो आपको मालूम हो तो क-
हिये ? । इस प्रश्न को सुनकर ग्रामपालने क
हा कि हे ब्रह्मदेव ! उस राक्षस की उत्पत्ति

सुनिये किसी समय इस ग्राम में एक खेतीके
करने वाला खेतिहार रहता था वह अपने खे

त की रक्षा करने में तत्पर खेतके निकट बैठा-
था और एक राह चलने वाले यात्रीको गृध्र
ने पकड़ कर मार डालना आरंभ किया दूस
री तरफ से एक मुनि आते थे उन्हों ने आवा
ज दिया कि हे खेतिहार दौड़ इस पथिक की
रक्षा गृध्रसे कर परन्तु थका होनेके कारण वह
उस यात्री की रक्षा नहीं करसका और उस गृ-
ध्र ने उस यात्री को मारडाला तब मुनिजी व-

हां आये और उसपर क्रोध करके उसे शाप दिया कि तू राक्षस होजा तब खेतिहर ने मुनि से प्रार्थना करके शापोद्धार पूंछा तो मुनिने कहा कि ब्राह्मण द्वारा गीताके ग्यारहवें अध्याय का पाठ करके तुमपर जल छोड़ने से तुमारी मुक्ति होगी और वह मरकर राक्षसहो गया और इस ग्राम वासियोंको उठाउठाकर खाने लगा तो सब ग्राम वासी बहुत घवड़ाये

और राक्षस की प्रार्थना करके उससे क्षमा की
प्रार्थना किया तब वह राक्षस बोला कि आज
से जो कोई इस ग्राम के बाहर रह जायगा उ
सी को मैं खाया करूंगा औ ग्राम के अन्दर
किसी से न बोलूंगा यह तो है ब्राह्मन् उस रा-
क्षस की उत्पत्ति है जब हमने अपने पुत्र को
सुना कि उसे राक्षस खागया तो हम दुःखी
होकर उस राक्षस के स्थान पर गये और उस

की अनेक भांतिसे स्तुति किया तब वह राक्ष
स बोलाकि तुम किसी उत्तम ब्राह्मण को
जो गीता के ग्यारहवें अध्याय का पाठ करता
होवे उसे बुला लाओ वह आकर मेरे ऊपर अ
भिषेक गीता के ग्यारवें अध्याय को पढकर
करे तो जितने हमने जीव खा डाले हैं वह औ
र आपका पुत्र मुक्त होजावे और मेरी यह
राक्षस योनि भी छूट जावे । तब हमने उस

राक्षस से पूछा कि तुमको यह कैसे मालूम हुआ तो उस राक्षस ने कहा कि किसी समय हमने देखा है कि एक गृध्र एक हड्डी को लिये उड़ा जाता था अकस्मात् वह हड्डी एक तालाव में गिर पड़ी उधर से एक मुनीश्वर जी आतेथे उन्होंने उस हड्डीको जलमें गिरते देख अपने साथियों से कहा कि हे भाइयों! आजसे यह तालाव परम पुनीत तीर्थ होग-

या सब साथियों ने कारण पूछा तो मुनीश्व
र जी ने कहा कि यह हड्डी उस मनुष्य की है
जो गीता के ग्यारहवें अध्याय का पाठ करते
हुये रास्ते में ही मरगया। वह मुर्दा रास्ते में ही
पड़ा रहा उसी की यह हड्डी है उसीसे यह
तालाब अति परम पुनीत हो गया जो को
ई इसमें पितरों को जल दान करेगा उसके
पितर तर जावेंगे और मुनीश्वरजी ने भी वहीं

पर तर्पणादि क्रिया है यह वार्ता हमनें भली भांति देखा और सुना है हे ग्रामपाल ! दूसरा हाल यह है कि एक यात्री गीता के ग्यारहवें अध्याय का पाठ करके यहीं सोगया था उस को हम खाने लगे तो मेरी डाढ़ों से वह काटा नहीं परन्तु उसकी मृत्यु तो होगई है इस लिये हे ग्रामपाल ! यदि आपको गीता के ग्यारवें अध्याय का पाठ करने वाला मिले

तो उसे लिवा लाओ और वह मेरे पर सात वार पढ़कर जल से अभिषेक करे तो मेरी व मेरे खाये हुये जीवों की मुक्ति हो जावेगी। इस भांति उसके वचन सुनकर आपको तेजवान जानकर आपकी शरण गत हूं जैसा उचित आप समझें वैसा करें। यह ग्रामपाल के वचन सुनकर सुनंदादि ब्राह्मण ग्रामपाल को संग लेकर राक्षस के स्थान को गये। वहां

अ०११

२६५

था और वह ग्राम पाल उन ब्राह्मणोंसे गीता के ग्यारहवें अध्याय को पढकर नित्य पाठ करने लगा तो उसकी आयु पूर्ण होजानेपर मृत्युको प्राप्त होकर वह भी स्वर्ग बासी होता भया और सुनन्दादि ब्राह्मण लोग अपनी तीर्थयात्रा पूर्ण करके निज निज स्थान में आये और गीता के ग्यारहवें अध्याय का पाठ करते हुये मृत्युवश होकर मुक्त होगये । हे

पार्वती ! इस भांति गीता के ग्यारहवें अध्याय का माहात्म्य है सो हमने तुमसे अति शूक्ष्म में वर्णन किया है जो कोई इस पुनीत कथा को पढ़ेंगे पढ़ावेंगे सुनेंगे सुनावेंगे वह गीताके ग्यारहवें अध्याय के पाठ के तुल्य फलको पावेंगे ।

इति श्री पद्ममहापुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संबादे श्रीगीतायां
एकादशोऽध्यायः माहात्म्य, समाप्तम् ॥ ११ ॥

अथ द्वादशोऽध्यायः प्रारम्भः ।

अर्जुन ने कहा कि हे भगवन् ! जो सदैव आपकी भक्ति में लगे रहते हैं और जो नाश रहित आपकी मूर्ति के बिना उपासना करते हैं उन दोनों में से अधिक योग जानने वाला कौन है ? श्री कृष्णजी ने उत्तर दिया कि हे अर्जुन ! जो मेरे में मन लगाकर पूर्ण श्रद्धा से जो सदैव मेरी ही उपासना किया करते हैं

वही मेरे मत से परिपूर्ण योगी हैं जो नाश र-
हित इन्द्रियादिक से भी जानने योग्य नहीं
निराकार सर्वव्यापक नित्यरूप की उपासना
करते हैं और इन्द्रियों के वेग को भली भांति
रोककर सर्वत्र एक समान जानने वाले सब
का भला चाहने वाले जो मेरे भक्त हैं वह मु
झको अवश्य पाते हैं हे अर्जुन ! जिनका चि
त निराकार उपासना में लगा रहता है उन-

को बड़ा क्लेश मिलता है कारण कि शरीर धारी को साकार को छोड़कर निराकार जानना अतिदुःख से भी नहीं होता । जो सब कर्मों को मेरे अर्पण करके मेरेही में मन लगाये अनन्य योग से ध्यान रूप मेरी उपासना करते हैं हे पार्थ ! जिनका मन मेरेही में लगा है उनको अनेक तरंगों से युक्त संसार सागर रूपी घोर समुद्र से शीघ्र पार कर देता

हूं। मेरेही में मन और बुद्धि को लगाओ ऐसा करने से निस्सन्देह मुझमेंही मिल जा ओगे। हे धनंजय ! यदि चंचल मनको मेरे में लगाने से असमर्थ हो तो अभ्यास योग से मेरे मिलने की इच्छा करो और जो अभ्यासयोग भी न कर सको तो मेराही भजन स्मरणादिक कर्म में लगे रहो और जो कुछ कर्म करो वह मेरेंही हितकरो तो भी मुक्ति

को पाजाओगे जो यह भी तुमसे न होसके तो हमारी शरण में आकर मेराही आश्रय करके सब कर्म फल को छोड़कर क्रमसे इन्द्रियों को वश में करो । निश्चय करके अभ्यास योग से ज्ञानयोग श्रेष्ठ है और ज्ञानयोग से ध्यान योग उत्तम है ध्यान योगसे कर्म के फलका त्याग योग और कर्म फल के त्याग योग से सदा शान्त रूप योग अति उत्तम है।

सब में मित्रता रखने वाला दयायुक्त अहं-
कार और ममता जिसको नहीं है सुख और
दुःख जिसका एक सम होवे क्षमा को धारण
किये सन्तोष वृत्तियुक्त योगाभ्यासी मन औ
र इन्द्रियों को वश में रखने वाला दृढ निश्च
य वाला मन और बुद्धि को मुझ में ही लगाये
हुये जो मेरा भक्त है वह मुझे सब से अधिक
प्रिय है । जिस पुरुष से लोगों को किसी भां

ति का भय न होवे और संसार के जो भय हैं उनसे जिसका मन उद्वेग न पावे सदैव एक रस हर्ष शोक भय व्याकुलता के समय जिसका मन भ्रमित न होवे वह भक्त भी मुझे प्यारा है। किसी पदार्थ की इच्छा नहीं पवित्र चतुर और क्रियावान उदासवृत्ति सदैव सुखी सब कर्मका त्यागी जो मेरा भक्त है सो मुझे प्यारा है। जो हर्ष नहीं करता क्रोध नहीं करता

शोच नहीं करता इच्छा नहीं करता शुभ औ
र अशुभ कर्मका त्यागी ऐसा जो मेरा भक्त
है सो मुझे प्यारा है। जिसको शत्रु और मि-
त्र एक समान है मान और अपमान बराबर
है चुपचाप शान्त पूर्ण सन्तोषी जिसका को
ई स्थान निश्चय नहीं है स्थिर बुद्धिवाला भ
क्त मेरे अति प्रिय है हे अर्जुन ! ऊपर कहे
हुये धर्म की जो उपासना करता है और पूर्ण

श्रद्धा से मुझमें लगे रहते हैं ऐसे भक्त एकसे एक अधिक से अधिक प्रिय हैं।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषधसु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे भक्तियोग वर्णन नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

अथ गीताके बारहवें अध्यायका महात्म्य।

श्री महादेवजी ने कहा कि हे पार्वती ! दक्षिण दिशामें एक कोहलापुर नामक नगर था जिसकी शोभा और बनावट अति रमणीक इन्द्रकी पुरी के तुल्य विशाल पुरी थी जहां

स्त्री और पुरुष दोनों देव रूप थे वहीं पर अने-
क देवी और देवताओं के मन्दिर व शिवजी
के अनेक सुशोभित स्थान थे ऐसे उत्तम न-
गर में एक राजकुमार युवावस्था में प्राप्त
गोरे रंगवाला सुडौल और सुन्दर मनुष्य ने
नगर में प्रवेश किया । नगर की शोभा देख-
ता हुआ महालक्ष्मी जी के मन्दिर में जाकर
अनेक भांति से भक्ति युक्त उत्तम उत्तम श

ब्दों से स्तुति करने लगा उस स्तुतिको सुनक
र जगज्जननी देवीजी प्रशन्न होकर प्रगट
हुई और कहा कि बत्स तुम क्या चाहते हो
सो कहो उस युवराजने शरणागत की रक्षा
करनेवाली श्रीमहालक्ष्मीजी को देखकर सा
ष्टांग दंडवत किया और कहा कि मेरा पिता
अश्वमेध यज्ञ को करता था यज्ञ करते हुये
रोग ग्रस्त होकर मृत्यु को प्राप्त हुये तब हमने

उस मृतक शरीर को तेलकी नावमें डालकर रक्खा है इस दुःखसे दुःखित तो हमथेही कि मेरे यज्ञ का घोड़ा कोई चुरा लेगया है हमने अनेक भांतिसे सर्वत्र ढूँढा परन्तु कहीं उसका पता नहीं चलता यही मेरा कार्य है हे देवी ! सो आप साधन कर दीजिये । यह बार्ता उस युवराज की सुनकर देवी जी ने कहा कि मेरे द्वार पर सिद्ध लोग रहते हैं उनसे जाकर क-

हो तो तुम्हारा कार्य पूर्ण हो जायगा यह क-
हकर भगवती जी तो अन्तर्ध्यान होगईं और
उस युवराज ने द्वारपर जाकर सिद्ध लोगों
से देवीजी करके भेजे जाने का कारण कहा
तब सिद्ध लोगोंने ध्यान धरकर देखा कि
इस के यज्ञ के घोड़े को तो इन्द्रलेगये हैं यह
बिचार कर मंत्रद्वारा देवतों को अभिमंत्रित
कर बुलाया देवतागण आकर सिद्धों से मि

ले और सिद्धोंकी आज्ञासे देवता लोगोंने शीघ्र उस युवराजके अश्वमेध यज्ञके घोड़े को इन्द्रसे लाकर देदिया तब वह युवराजने सिद्धोंकी प्रार्थना करके अपने पिताको जीवित करने केलिये सिद्धगणों से कहातो वह सिद्धलोग युवराजके साथ उस मृतक शरीर राजाके शवके पास गये और जाकर गीताके बारहवें अध्याय का पाठ करके जल

को उस मुर्देपर छिड़क दिया तो वह राजा बृहद्रथ उठकर बैठगया और बोला कि यह किसके प्रभावसे मैं जीवित हुआ हूं तब युवराजने सम्पूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया और राजा बृहद्रथ सुनकर अति प्रसन्न हुआ झट उठकर उन सिद्धगणोंको नमस्कार करके अनेक भांतिसे स्तुति किया सिद्धगण प्रसन्न हुये तो राजाने पूछाकि हे सिद्धगण आपने

किस मन्त्रसे मुझे जीवित किया तो सिद्धों
ने कहाकि गीताके बारहवें अध्याय के पाठ
को करके जल छिड़कने से आप जीवित हुये
हैं मैं सदैव गीताके बारहवें अध्याय का पाठ
किया करता हूं यह सुन राजा बृहद्रथने सि-
द्धोंसे गीताका पाठ पढ़ा और सुना साथही
सिद्धों के द्वारा अश्वमेध यज्ञको पूर्ण किया
और वह राजा पुत्रसहित अन्तमें सद्गतिको

प्राप्त हुआ। हे पार्वती! गीता के बारहवें अ-
ध्याय का यह अद्भुत माहात्म्य है जो हमने
वर्णन किया है कि जिसके पढ़ने और सुनने
से सद्गति मिलती है ॥ १२ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीश्वरसम्वादे गीतायां द्वादशोऽध्यायः॥१२॥

अथ त्रयोदशोऽध्याय प्रारम्भः।

श्रीअर्जुन ने कहा कि हे केशव! प्रकृति और
पुरुष क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ ज्ञान और ज्ञेय के

जानने की मेरी इच्छा है सो मुझ प्रति कहिये श्रीकृष्णचन्द्र भगवान ने कहा कि हे कौन्तेय ! इस शरीर को क्षेत्र कहते हैं और इसके तत्व को जानने वाला ही क्षेत्रज्ञ कहाता है। हे भारत ! समस्त क्षेत्रों में क्षेत्रज्ञ मुझको जानिये क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का जो जानना है वही ज्ञान है। अब वह क्षेत्र कैसा है कौन से उसमें विकार हैं उसका क्या प्रभाव है सो मुझसे सं

क्षेप में सुनो कि जिसको ऋषिलोगों ने बहुत विस्तार से कहा है और वेदों में कई प्रकारसे अलग अलग कहा गया है जिसमें आत्माका निश्चय होवै वह, यह है कि पांचों महा भूत अहंकार बुद्धि माया पांच ज्ञान इन्द्री पांच कर्मेन्द्रिय मन पांच इन्द्रियों के विषय अभिलाषा वैर सुख दुःख बुद्धि को धारणा शक्ति इन सब से मिलाहुआ एक क्षेत्र कहा

गया है। मान और दंभ से रहित होना किसी
को दुःख न देना क्षमा और नम्रता गुरू की
सेवा पवित्रता दुःखके समय मन को स्थिर
करना इन्द्रियों के विषय में बैराग्य अहंकार
की पूरी निवृत्ति जन्म लेना मरना वृद्धाव-
स्था रोग से पीड़ित होना मन में खेद इनके
दोषों को बारम्बार देखना मनकी आसक्ति
स्त्री पुत्र घर और पदार्थों में न रखना नित्य

प्रिय या अप्रिय वस्तु के मिलने को चित्तमें समान जानना मनुष्यों की संगति में प्रीति न रखकर अनन्य योग से मुझमें दृढ़ भक्ति करके एकान्त स्थान में बैठकर अध्यात्म ज्ञान का नित्य अभ्यास करना तत्वज्ञान के अर्थ पर ध्यान रखना इसीको हे अर्जुन! ज्ञान कहते हैं इस ज्ञानके अतिरिक्त जो ज्ञान है उस को अज्ञान कहते हैं। हे पार्थ! आपने जो

पूछा है कि जानने योग्य कौन है वह कहता हूं सुनो कि जिस के द्वारा अमृत रूप पदवी मिलती है वह यह है कि आदि अन्त से रहित परम ब्रह्म न सत् कहा जाता है न असत् जिस के हाथ पैर नेत्र शिर मुख कान सब स्थान में स्थित हैं यानी वह परमात्मा सर्वव्यापक है सब इन्द्रियों के गुणों में प्रकाशित और सब इन्द्रियों से अलग साथही सब पदार्थों में आ

सक्ती रहित तीनों गुणोंसे पृथक् और गुणों
के पालननहार समस्त चराचर जगतकी सृष्टि
सें बाहर और भीतर पूर्णरूप भी और अत्य
न्त शूक्ष्म सबसे अतिदूर और सबके अति
निकट सम्पूर्ण जगतमें मिला है और अलग
की तरह रहता है यही सब जगत का पालन
हार उत्पत्तिकरता नाशकरता जो परम ब्रह्म
परमात्मा है उसीको जानना चाहिये। इसी

परम ब्रह्म परमात्मा को जानकर मेरे भक्त मेरे भाव को पहुंचते हैं। हे अर्जुन! प्रकृति (माया) पुरुष (ईश्वर) इन दोनोंको अना-दि जानो विकार और गुण सब प्रकृति से ही उत्पन्न भये हैं। काम और उसका कारण कर्तव्यता का हेतु प्रकृति माया कही जाती है और सुख दुःख के भोग का कारण (हेतु) लेना होता तो मुक्तही होजाता है कोई आत्मा

को ध्यानमें देखते हैं कोई अपने ही में आप
को देखते हैं कोई सांख्य और योग में देखते
हैं कोई कर्मयोग से देखता है कोई ध्यानमार्ग
से हे अर्जुन ! कोई कोई किसी दूसरे से जान
कर उपासना करते हैं वह भी दृढ़ भक्ती के
करने से मुक्त होजाते हैं। हे भरतर्षभ ! जित
ने जीव अथवा वस्तु स्थावर और जंगम उत्प-
न्न होते हैं वह सब क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के संयोग

से उत्पन्न हुये हैं। परपुरुष कहाता है। जी-
वात्मा (पुरुष) प्राकृतिक (माया रचित)
शरीर में रहकर कर्म करनेवाले कर्मोंके फल
रूप सुख दुःख को भोगता है और उन्हीं के
अनुरूप उत्तम या अधम शरीर मिलता है।
शरीरमें जो ज्ञाता रहता है उसीको उपद्रष्टा
अनुमता भर्ता भोक्ता महेश्वर परमात्मा क-
हते हैं हे अर्जुन! जो अन्तरात्मा पुरुष माया

को और मायाकृत गुणोंको और उनके वि-
कारोंको भली भांति जानता है उसका पुनः
जन्म नहीं परमेश्वरको सब जगतमें समान
विराजमान और सब संसारके नाश होनेपर
भी जो उसको अविनाशी देखता है उसीकी
दृष्टि उत्तमहै और उसीका देखना मानो दे-
खना है। ईश्वर को जो सबदेश सबकाल सब
वस्तुमें समान निश्चय पूर्वक विराजमान दे

खते हुये अपनी आत्माको आप हिंसा नहीं करता वह देहके अन्तमें मुक्तिको पाता है यह जगतके समस्त कर्म प्रकृति [माया] केकिये हुये हैं आत्माको जो कर्मका कर्त्ता नहीं देख ता वही आत्माको देखताहै। जितनी यह च राचर सृष्टि है उसको आत्मामें ठहरा हुआ सम्पूर्ण सृष्टिका विस्तार देखता है वह ब्रह्म में मिल जाता है जैसे-आकाश सब जगह

व्यापक है और शूक्ष्म होनेसे किसी पदार्थमें लिप्त नहीं होता वैसेही यह आत्मा सब शरीरोंमें रहकर उसके गुण दोष को ग्रहण नहीं करता जैसे-एक सूर्य सम्पूर्ण जगतको प्रकाश करता है वैसेही हे भारत! यह आत्मा समस्त शरीर धारियों को प्रकाशित करता है इस भांति ज्ञानवान पुरुष क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ दोनों का भेद प्रकृति [माया] पुरुष [ईश्वर) को

जानते हैं वह मुक्त हो जाते हैं ।

इति श्री भगद्गीता सूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे क्षेत्र क्षेत्रज्ञ निर्देश नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

अथ गीता के तेरहवें अध्याय का माहात्म्य।

श्रीमहादेवजी ने कहा कि हे पार्वती ! गीता के तेरहवें अध्याय का माहात्म्य सुनो दक्षिण देश में तुंगभद्रा नामक महानदी के किनारे हरिहरपुर नामक नगर है जहां पर भगवान हरिहर देवजी स्वयं विराजमान रहते हैं जि-

नके दर्शन सेंही मनुष्य श्रेष्ठ कल्याण को
प्राप्त होजाते हैं उसी नगर में वेदपाठी उच्च
कर्म के करनेवाला एक हरिनामक दीक्षित
ब्राह्मण हुआ उसकी स्त्री महादुष्टा व्यभि-
चारिणी थी वह अपने पति से कभी मीठे
वचन न बोलकर पर पुरुषसे जंगल में रात्रि
का वादा करके प्रतीक्षा करने लगी जब रात्रि
आई और वह समय बसन्तऋतु का था अ-

त्यन्त सुहावना ऐसे समय रात्रि में वह कामा
तुरा स्त्री अपने कहे हुये जार पति के मिलने
को सौभाग्य समझ अत्यन्त प्रसन्न हो नियं
मित स्थान पर जा पहुँची परन्तु अपने स्ने-
ही को वहाँ न पाकर इधर उधर भटकने ल-
गी इतने में वृक्षों के पत्ते जो वसन्त ऋतु के
आने से प्रथम ही गिरे थे उनमें उसके पैर ल
गने से खरभर शब्द होने लगा और वहां पर

एक व्याघ्र सोया था वह झट उठा और क्रोध
में आय जंभुआई लेता हुआ उस स्त्री को
घेर लिया और घुर घुर शब्द करने लगा वह
कामातुरा स्त्री व्याघ्र से बोली कि हे व्याघ्र !
किस लिये हमारे मारने को यहां पर आयेहो
बली लोग स्त्री कृपण और दुखी को नहीं
मारते यह सुन व्याघ्र हँसकर बोला कि हे दु-
ष्टे ! मैं भी दक्षिण देशमें मलपहा नदी के कि

नारे उसीके नजदीक ही मुनिपर्णा नामक न
दी है उन दोनों नदियों के मध्य में पंचलिंग
महादेवजी हैं वहीं पर मैं पूर्व जन्ममें ब्राह्मण
था और सदैव उन दोनों नदियों के किनारे
दानको लेतारहा यहांतक कि मृत्यु का सम
य भी आगया परन्तु दान लेना हमने नहीं
छोड़ा अकस्मात् एक दिन मुझे एक कुत्ते
ने काटलिया और मेरी मृत्यु होगई तो व्याघ्र

की यह योनि मुझे मिली है मैं मनुष्य के कहे
हुए अर्थ को जानता हूं और सदैव यह ध्यान
रखता हूं कि धर्मात्मा मुनि साधु जन पतिव्रता
स्त्री को मैं नहीं भक्षण करता हूं किन्तु पापी
दुराचारी दुष्टा स्त्रियों को तो कभी खाने से
छोड़ता ही नहीं हूं। ऐसा कहकर वह व्याघ्र अ-
पने नखों से उस स्त्री को फाड़कर मारकर खा
गया। उसी समय यमराज के दूत लोग आये

और उस स्त्री को यमपुरी में लेजाकर यमरा-
ज की आज्ञा से विष्टा मूत्र रक्त से भरे कुण्डों
[गड्हों] में गिरा दिया वहां के कष्ट भोग
कर रौरव नर्क में वास करने की आज्ञा मिली
फिर वहां से निकाल कर जलती हुई अग्नि में
उसे यमराज के दूतों ने छोड़ दिया इस भांति
अनेक वर्ष पर्यन्त नर्क के दुःख भोगकर चा-
ण्डाल के घर वह फिर स्त्री होकर जन्म लेती

भई परन्तु पूर्व जन्म की वासना से नर्कके तो दुःख भूलकर फिर वही वेश्या वृत्ति करने लगी एक दिन रास्ते में जा रही थी तो श्रीमहादेव जी के मन्दिर निकट जृम्भकादेवी का मन्दिर था वहांपर वासुदेव नामक ब्राह्मण गीता के तेरहवें अध्याय का पाठ कर रहे थे उस वेश्याने देखा कि यह ब्राह्मण युवावस्थामें प्राप्त अत्यन्त स्वरूपवान् है और धनी भी

मालूम पड़ते हैं यह विचार कर उन ब्राह्मण
देवता के निकट हाव भाव कटाक्ष युक्त खड़ी
होगई वह वासुदेव ब्राह्मण ने उस स्त्री को दे
खकर गीता के तेरहवें अध्याय का पाठ जो
करते थे सो तो करते ही रहे और आचमनी में
जल लेकर उसके ऊपर फेंक कर इसारा कि
या कि तू यहां से चली जाओ उस जल के प-
ड़ते ही और गीता के तेरहवें अध्याय के सुन-

ने से वह पवित्र होगई और कुछ ही समय बाद वह मरकर स्वर्ग को जाती भई हे पार्वती ! यह गीता के तेरहवें अध्याय का माहात्म्य है सो हमने तुमसे कहा कि जिस माहात्म्यको सुनकर घोर पापी भी मुक्त हो जाते हैं ।

इति श्री पद्ममहापुराणे उत्तरखण्डे सतीश्वर संवादे श्रीगीतायां त्रयोदशोऽध्यायः माहात्म्य समाप्तम् ॥ १३ ॥

अथ चतुर्दशोऽध्याय प्रारम्भः ।

श्रीकृष्णचन्द्र भगवान ने कहा कि हे अ-

र्जुन ! अब फिर हम उत्तम परम ज्ञान को कहते हैं कि जिसको जानकर मनुष्य परमसिद्धि को पाते हैं इस ज्ञानको पाकर योगी हमारे धर्म के समान होकर फिर जन्म नहीं लेते और उनको किसी समय किसी भांति का दुख नहीं मिलता है वह यह है कि मेरी योनि अर्थात् बीज बोने की जगह प्रकृति (माया) है उसमें गर्भ धारण करता हूं उसके बाद स-

ब जगत की उत्पत्ति होती है हे कौन्तेय ! सब योनियोंमें जो मूर्ति उत्पन्न होती हैं उन सब की उत्पत्ति की जगह महत् ब्रह्म अर्थात् प्रकृति और मैं पिता बीज डालने वाला हूं । सत रज-तम यह तीनों गुण प्रकृति से भये हैं सो हे महाबाहो ! यह तीनों देहधारी के शरीर में प्रवेश करके उसे बांधते हैं हे अनघ ! अर्जुन उन गुणोंमें सतोगुण निर्मल होने के कारण

सुख और ज्ञान की इच्छा में बांध देता है और रजोगुण इच्छा और प्रीती का स्व-रूप तृष्णा के ध्यान से उत्पन्न भया जानो जो जीवात्मा को कर्म की प्रीति में बांध देता है हे भारत! अज्ञान से प्रकट हुआ सब शरीर धारियों को मोहने वाला तमोगुण अपने उन्माद आलस्य और निद्रा से बांध लेता है। रजो-गुण और तमोगुण को हटाकर सतोगुण प्र-

अ० १४

३४१

काश होता है हे भारत ! सतोगुण और तमो
गुण को दबाकर रजोगुण होता है और सतो
गुण और रजोगुण को हटाकर तमोगुण बैठ
जाता है हे अर्जुन ! जिस समय इस शरीर के
सब द्वारों में ज्ञान का प्रकाश होता है उस सम
य सतोगुण की वृद्धि जानना लालच और
लोभ में लगे रहना कार्य के आरम्भ का वि-
चार करना और उसी में रात दिन पड़े रहना

जो कार्य न होसके उसके भी करने की इच्छा
(मनमोदक) करना जब पुरुषों में वासना
उत्पन्न हुई तो रजोगुण बढ़ती जानना हे
भारतर्षभ ! बुद्धि की मलीनता रुचिका न
होना भूलजाना विचार से रहित होना सदैव
भ्रम होना हे कुरुनन्दन ! यहगुण तमोगुण
से ही होते हैं। जिस समय सतोगुण की वृ-
द्धि होती है और शरीर धारी ने देह त्याग

किया तो वह मरकर उत्तम पद प्रकाशमान
लोक को पहुंचता है रजोगुण की वृद्धि के
समय देह छोड़नेपर कर्म करनेवाले मनुष्यों
में जन्म लेकर कार्य के मनोरथ रूप रजोगु-
ण में ही लगा रहता है वैसे ही तमोगुण की
वृद्धि के समय मरने पर मूढ़ योनि में जन्म
लेकर तमोगुण रूप कार्य किया करता है।
सतोगुण के उत्तम कार्य का फल उत्तम है र-

जोगुणका फल दुःख और अज्ञान तमोगुण
का फल है। सतोगुणी ऊपर के स्वर्गादि लो-
क को जाते हैं रजोगुणी मध्य मृत्युलोक मे
ही रहते हैं और तमोगुणी अधम गतिको पाते
हैं। ज्ञानी पुरुषके समस्तकार्य तीनों गुणोंके
द्वारा होतेहैं यह जान मेरे शिवाय किसी को
कर्ता नहीं मानता वह निस्सन्देह मेरे पदको
पहुँचता है यह तीनों गुण जो शरीर धारीके

देहसे उत्पन्न होते हैं उनसे रहित देहधारी जन्म मरण वृद्धावस्था आदि के दुःखों से छूटकर अमृतरूप भोजन करने लगताहै। अर्जुन ने कहा कि हे प्रभु ! सर्वव्यापी सामर्थी इन तीनों गुणों से अलग कौन कौनसे लक्षणों से जाना जाता है और उसका क्या आचार है किस उपाय से इन तीनों गुणों से निवृत हो सक्ता है यह मुझसे कहिये ? श्रीकृष्णचन्द्र

भगवान ने कहा कि हे पाण्डव ! ज्ञान होने से
व्यवहार में लगने से मोह में पड़ने से जो कुछ
सुख दुःख आवै उसमें वह सुखी और दुःखी
न होवै और जो वस्तु जाती रहै उसकी इच्छा
न करै उत्तम मध्य अधम पदार्थ को देखकर
चित्त को चलायमान न करै यह तीनों गुण
अपना अपना प्रभाव दिखाय रहे हैं ऐसा जा
नता रहै सुख दुःख को समान जानकर आ-

अ० १४

३४७

त्मा में स्थित रहै लोहा पत्थर और और सोना
को बराबर जानै मित्र शत्रु एक सम देखै प्र-
शंसा और निन्दा जिस धैर्य धारी को समान
होवै जिसको आदर और अनादर समान है
सब बातों का उद्योग त्याग किये रहै वही गु-
णों को पार कर जाता है हे अर्जुन! मेरी स-
च्ची निष्ठा के साथ भक्ति योग से सेवन कर-
ता है सोई इन गुणों से छूट कर ब्रह्म होने के

योग हो जाता है । निश्चय करके ब्रह्म के बा-
सका स्थान मैं हूँ वह अखण्ड ब्रह्म अविना
शी सत्यरूप धर्माकार नित्यानन्द एकरूप
है ऐसा जानकर जो मेरा भक्त मेरे में चित्त
लगाकर दृढ़ भक्ति से मेरे ही को जान कर
मेरा भजन करता है वह निस्सन्देह ब्रह्म में
मिल जाता है ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे कृष्णार्जुन संवादे
गुणत्रय विभाग योगोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अथगीताके चौदहवें अध्यायका माहात्म्य

श्री महादेवजी बोले कि हे सुन्दर नेत्र वाली
हिमालय की कन्या पार्वती! संसार के भवब
न्ध छूटने के लिये गीताके चौदहवें अध्याय
का माहात्म्य वर्णन करते हैं उसे सुनिये। पृ-
थ्वी मंडल में काश्मीर एक देश है जो सरस्व
ती जीकी राजधानी कही जाती है जिस दे-
शमें सरस्वती जी सदैव हंसपर सवार सभी

को संस्कृत विद्या का वर दिया करती हैं जहां
के वासी सभी पंडित हैं उसी देश में शौर्यव-
र्मा नामक राजा हुआ और सिंहलद्वीप में
अत्यन्त पराक्रमी बेताल नामक राजा हुआ
इन दोनों राजाओं की परस्पर अत्यन्त प्री-
ति गहरी मित्रता हुई। एक समय राजा शौ-
र्यवर्मा ने दो कुतियाओं को राजा बेताल के
पास भेजा राजा बेताल ने मित्र की भेजी जा

न अति आदर से स्वीकार किया और उन कु-
तियाओं के बदले कुछ समय बाद मतवाले
हाथी बड़े बड़े घोड़े मणि भूषण चँवर भेज-
ता भया उस सामान को राजा शौर्यवर्मा ने
अपने यहाँ रख लिया । कुछ थोड़े समय बा-
द राजा बेताल राजकुमारों के साथ दोनों कु-
तियाओं को संग लिये शिकार खेलने के लि
ये जंगल में गया वहां जाकर आपस में बाजी

लगाय उन दोनों कुतियाओं को एक हरिन के पीछे दौड़ाया वह तीनों ऐसे भगे कि उनका पता न लगने लगा और उनमें से एक कुतिया ने उस हरिन को घेर कर पकड़ही लिया परन्तु वह राजा और राजकुमार यह देखकर बड़ी प्रशन्नता से कहने लगे कि हम जीते

अ० १४

यह कहे हम जीते इसका शब्द होने लगा तो यह कुतिया ज्योंही पीछे को घूमकर देखने

३।१३

लगी कि हरिन कुतिया के मुख से निकल भागा तबतो कुतिया भी इधर उधर सूंघ सूंघ कर ढूंढने लगी और हरिन के गलेमें कुतिया के दांत लग गये थे उससे दुःखित वह हरिन एक जगह छिपा था लेकिन उस कुतिया ने उ से ढूंढही लिया और वह हरिन फिर भागा । भागते २ उसी जङ्गल में शान्तचित्त वत्स नामक ब्राह्मण गीता के चौदहवें अध्याय का

पाठ कर रहे थे और उनका शिष्य निज पैर
को धोकर कुटी के भीतर प्रवेश करने लगा
त्योंही वह हरिन और कुतिया दोनों प्यास
से पीड़ित मुहँ में फेन आरहा है उस आश्रम
में पहुँचकर पैर के धोवन जल में दोनों गिर प
ड़े उस कीचड़ में पड़े हुए सँद कर वह दोनों म
र गये तो वह हरिन विमान में चढ़कर और
जन्म मरण के संकट से तरकर स्वर्ग को प्राप्त

हुआ और वह कुतिया भी जरा देर जीकर मरगई तो वह विमान में चढ़ स्वर्ग को चली गई । उसी समय मेधावी नाम शिष्य उन दोनोंका हाल देख कर विस्मय युक्त उन दोनों के पूर्व जन्मका वैर स्मरण कर हँसने लगा तो वहाँ पर स्मेर लोचन ब्राह्मण और समुद्ररूप राजा बैठे थे उन्होंने मेधावी जी को नमस्कार करके हँसने का कारण और कुति

या व हरिन स्वर्ग को चलेगये इसकी कथा पूछने लगे तब शिष्य मेधावी जी बोले कि हे राजन् ! यहांपर परम तपस्वी वत्स जी गीता के चौदहवें अध्याय को जपते हुये तप करते हैं मैं उनका शिष्य हूं सो मैं भी गीता के चौ-दहवें अध्याय को जपता रहता हूं सो मेरे चरण के धोवन जल व कीचड़ के स्पर्श से यह कुतिया और हरिन स्वर्ग को गये । तब राजा

गीता०
भाषा०
२५८

ने उनके पूर्व जन्मकी कथा पूछी तो मेधावी
जी के शिष्य ने कहा कि यह हरिन पूर्व जन्म
में महाराष्ट्र देश का केशव नामक ब्राह्मण
था और वह कुतिया विलोभना नामक उन्ही
की स्त्री थी यह स्त्री स्वेच्छाचारी हुई थी
एक दिन पतिने स्त्री पर क्रोध करके उसे मार
डाला उस स्त्री के मार डालने के पाप से ब्रा-
ह्मण तो हरिन हुआ और वह स्त्री पाप के

कारण कुतिया हुई पूर्वजन्म का बैर उन दोनों को अनेक योनि तक भी भूला नहीं परन्तु आज दोनों सद्गति को प्राप्त होगये । यह कथा सुनकर राजा भी वहांपर मेधावी जी के शिष्य से गीता को पढ़कर और उस गीता के अभ्यास करते हुये श्रेष्ठगति को प्राप्त भया । हे पार्वती ! ऐसा महात्म्य गीताके चौदहवें अध्याय का है जो हमने तुमसे वर्णन किया

कि जिसको सुनकर संसारी जीव मोक्ष गति को प्राप्त होवेंगे ।

इति पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संवादे गीतायां
चतुर्दशोऽध्यायः माहात्म्य समाप्तम् ॥ १४ ॥

अथ पञ्चदशोऽध्याय प्रारम्भः ।

श्रीभगवान ने कहा कि हे अर्जुन ! ऊपर को जड़ नीचे डाली अनित्य नाश रहित जो अश्वस्थ [पीपल] कहा है वेद की ऋचा जिसके पत्ते हैं इसको जो जानता है वही वेद

का जानने वाला है नीचे ऊपर जिसकी डा-
ली फली है जो तीनों गुणोंसे बढती भई है
इंद्रियों के विषयसे पुष्ट (मजबूत) है नीचेकी
जड कर्म करके बंधी है जिसका रूप इस लो
कमें नहीं पाया जाता जिस का आदि अन्त
मध्य नहीं है जिसकी जडैं बहुत मजबूत हैं
ऐसे वृक्ष को असंग रूपी तेजधार वाले हथि
यार से काटकर तत्पद ढूंढना चाहिये जिस प-

दको पहुंच कर फिर जन्म नहीं लेना पड़ता
उसी आदि पुरुष की शरण में होना उचित है
कि जिससे इस पुरानी सृष्टि का फैलाव है।
मान मोहसे रहित संग के दोषों को जीतकर
सदा आत्मज्ञान में लगे हुये सब कामना से
छूटे हुये सुख दुःख से रहित ऐसे पूर्ण पंडित
जन अविनाशी पद को प्राप्त होते हैं। जहां
सूर्य चन्द्रमा अग्निका प्रकाश नहीं पहुंचता

जहां जाकर फिर नहीं आते वही मेरा परम
धाम है । इस लोक में जीव मेरा ही अंश है
सो जीव मन समेत छः इन्द्रियों को
जो प्रकृति (माया) रहती उन्हीं को खींच
ता है और वह उसके साथ खिंच भी जाता है
कान आंख त्वचा वाणी नाक यह पांचों मन
को प्रधान करके अपने अपने स्वाद को भोग
ता है। एक शरीर को छोड़ते हुये दूसरे शरीर

अ०१५

मैं जाते हुये गुणों के सहित सुख उठाते हुये मूढ़ लोग नहीं देखते परन्तु परज्ञान की दृष्टि वाले देखते हैं। इस जीवात्मा को योगी लोग यत्न करके अपने स्वरूप में स्थित देखते हैं और अज्ञानी मलीन हृदय वाले यत्न करने पर भी इस आत्मा को नहीं देखते जो सूर्य चन्द्र अग्नि में प्रकाश है वह सब मेरा प्रकाश है पृथ्वी में प्रवेश कर के अपनी शक्ति से जगत

को धारण करता हूं और चन्द्रमा का स्वरूप
रसमय होकर सम्पूर्ण औषधियों का पालन
करता हूं उदराग्नि रूप होकर समस्त जीव
धारियों के शरीर में वास करके प्राण अपान
वायु के साथ चार प्रकार (भक्ष्य भोज्य लेह्य
चोष्य) के भोजन को पचाता हूँ सबके हृदय
में मैं विराजमान हूं मुझसे ही स्मृति (याद
रखने की शक्ति) ज्ञानस्मृति और अज्ञान

सब वेदों से मैं ही जानने के योग्य हूं । वेदान्त शास्त्र का निर्माण करने वाला और वेद का जाननेवाला भी मैं ही हूं । इस जगत में क्षर (नाशवान्) दूसरा अक्षर (अविनाशी] यह दोही पुरुष हैं जिसमें सबभूतक्षर है और कुटस्थ अक्षर कहाता है । उत्तम पुरुष जिसको परमात्मा अविनाशी सर्वव्यापक सर्वसामर्थी कहते हैं वह

और ही है जो तीनों लोकों में पूर्ण होकर सब

का पालन करता है इस प्रकार क्षर अक्षर इन

दोनों से बाहर हूं मुझे वेद में पुरुषोत्तम कहते

हैं। जो बुद्धिमान जन बुद्धि के द्वारा मुझ पु-

रुषोत्तम को जानता है वही हे भारत! सब

पदार्थ का जाननेवाला सब भाव से मेरा भज

न करता है हे अनघ! अर्जुन यह गुप्त से भी

गुप्त ज्ञान हमने आपसे कहा हे भारत! जि-

अ० १५

सने इस ज्ञानको जानलिया उसने मानो कर नेवाले सभी कार्य कर लिये ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सुब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सम्वादे पुरुषोत्तम योगवर्णनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥

अथ गीता के पन्द्रहवें अध्याय का माहात्म्य

श्रीमहादेवजी बोलेकि हे मृगनयनी ! पार्वती अब मैं तुझसे गीताके पन्द्रहवें अध्यायका माहात्म्य कहताहूं सो सुनो एक परम दयालु नरसिंह नामक राजा हुआ कि जिस

की प्रजा स्वर्गकी भांति राजाके राज्यमें सुख
पातीथी राजाकी राज्यसामग्री इन्द्रकी भांति
अत्यन्त सुशोभितथी इसराजाका सुभगना
मक वृद्धमंत्रीथा जो अनेकशास्त्र कलाओंका
जाननेवाला चतुर राज्यकार्यके संभालने वा
ला धर्मावलम्बी था एक दिन उसकी बुद्धि
अपनेपुत्रोंकी तरफगई और विचार करनेल-
गाकि राजा मेरे मरजानेके बाद कहीं मेरेपुत्र

को मंत्रीपद नदेतो मेरेपुत्रोंको कष्टहोगा इस
भांति की कुमतिमें आयकर विचारकिया कि
राजाको किसीबहाने जंगलमें मारडाले और
समस्तप्रजा और नौकरलोग मेरेस्वाधीन हैं
अपनेपुत्रको राज्यगद्दीमें बैठाकर राजाबना
देवै इसभांति मनमें ठान राजाके मारने का
मौका देखनेलगा उधर मंत्रीकी आयुपूर्ण हु
ई कालने आकर मंत्रीको घेरा और मंत्रीकी

मृत्युहोगई यमराजके दूत मंत्रीको पकड़कर
यमराजके सामने लेगये धर्मराज विचार क
रनेलगे कि इसने जन्मसे मरणातक कोई पाप
नहींकिया परन्तु मनमें निजस्वामी राजाको
ही इसने मारनेका विचार कियाथा इस मान
स पापका विचारकरके यमराजने सिन्धुदेश
में उसे घोडेकी योनिमें उत्पन्न किया। वह
मंत्रीघोड़ेका जन्मपाकर बड़ेही उच्चश्रेणीका

घोड़ाहुआ जोंही उसघोड़ेको देखेवही लेनेके लिये मोहित होजावे कुछ समयबाद जबवह घोड़ा युवाहुआ तोघोडेके मालिकने एकध-निके बनियाके हाथ उसेवेंचादिया । उसबनि-याने घोडेको लेजाकर कुछरोज घरपररक्खा एकदिन उसने शोचाकि यह उत्तमघोडा रा-जाके योग्यहै यह विचारकर घोडेको संग लें-कर कई नौकरोंके साथ राजाके यहां आया

और खबरकिया कि एक सौदागर घोडे को
बेचनेआया है प्रथमराजाने घोडेकी पहिचा
न जाननेवालोंको भेजकर दिखलाया उनसे
घोडेकी तारीफ़ सुनकर खुद देखनेगया उस
घोडेको देखकर उसबनियांने जो कुछमांगा
वहीदेकर राजाने लेलिया और राजाकी आ
ज्ञासे जहां सब घोडेबंधेथे वहीं बांधदिया इध
र राजा अपने मंत्री के मरजानेबाद मंत्री के

बड़ेपुत्रको मंत्रीका आसन देकर राज्यकरता
रहा । एक दिन राजाकी इच्छा शिकार खे-
लनेको हुई उसी नयेघोड़े पर सवारहोकर जं
गल में शिकार खेलने लगा कुछदेर के बाद
सब लोग राजासे छूटगये और राजा प्याससे
पीडित होकर घोडेको तो एक वृक्षसे बांधदि
या आप घोडेसे उतर पानीको ढूंढनेलगा उसे
पानीतो मिलानहीं वायुके झोकेमें उडता न-

आ एक कागद मिला वह लेकर घोडेके निक
ट आया और बायां हाथ घोडेके ऊपर टेककर
खडा होकर उस कागज को पढने लगा उस में
गीताके पन्द्रहवें अध्याय का आधा श्लोक
लिखा था उसको राजाने पढा वह आधा श्लो
क सुनकर वह घोडा पृथ्वीमें गिरपडा और उ-
सकी मृत्यु होगई उधर आकाश में भगवान
केदूत विमान लेकर आये और घोडेकी जी-

वात्मा विमान में बैठकर संसार सागर से पार होगई । राजा बड़े आश्चर्य में प्राप्त वहां से खिन्नमन वह कागज हाथमेंलिये चलदिया कुछदूर चलनेके बाद एक मुनिकी कुटी मिली वहांपर राजाने जलपिया और अपना समस्त वृत्तान्त मुनिको प्रणाम करके कह सुनाया मुनिजी सुनकर अतिप्रशंन हुये और राजासे उसघोड़ेके पूर्वजन्म का हालबताया

कि आपके मार डालनेकी इच्छा करनेवाला प्रथमका मंत्रीहै आपको मारनेकी इच्छा किया उस पाप से यह घोडा हुआ था आज इसने गीताके पन्द्रहवें अध्याय के आधे ही श्लोकको सुनकर अपने पापसेछूटकर प्रथम के किये पुरायके प्रभावसे और गीताके आधे श्लोकके सुननेसे मुक्त हो गया है। तबराजाने मुनिकी अनेक भांतिसे स्तुतिकिया औरवहीं

पर सम्पूर्ण गीताको पढ़ा और मुनिकी आज्ञा लेकर निज राज्यमें आय अपने बड़े पुत्रको राज्यगद्दी देदिया और राज्यकार्य सब बता कर गीताके ध्यानमें मग्न होगया कुछ समय के बाद जब राजाकी मृत्यु हुई तो वह राजा नृसिंह भी भवसागरसे पार पाय बिमानमें बैठकर स्वर्गको चलागया हे देवि ! यह गीता के पन्द्रहवें अध्यायका परम पुनीत माहात्म्य

है कि जिसको सुनकर मनुष्योंके पापपहाड़ नाश होकर स्वर्ग वास मिलता है ।

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीश्वर संवादे गीतायां पञ्चदशोऽध्याय माहात्म्यं समाप्तम् ॥ १५ ॥

अथ षोडसोऽध्यायः प्रारम्भः ।

श्रीकृष्णचन्द्र भगवानने कहाकि हे भारत ! अब हम तुमसे किस भावके और किस विचार के किस चेष्टासे उनकी पहिचान होतीहै वह वर्णन करतेहैं सो सुनो सदैव निर्-

य रहना हृदय को शुद्धभावनामें लगाये रह
ना ज्ञान योग में दृढ रहना दान करना इन्द्रि
यों को दमन करते रहना यज्ञ करना वेदका प
ढना तपस्या करना सबमें प्रीति करना किसी
को भी दुःख न देना सत्यबोलना किसीपर भी
क्रोध न करना उदारबुद्धि रहना मनको स्थि
त रखना दूसरेके दोषोंको छिपाना फलकी इ
च्छाको त्यागकर कार्य करना और सबपर द

या रखना संतोष करना कोमल मधुर वचन
बोलना अपयश से डरते रहना उचित अनु-
चित विचार पूर्वक लज्जा करना विना प्रयो-
जन मिथ्या बकवाद नहीं करना जवान स्व
रूप रहना बदला लेने की सामर्थ्य होने पर
भी क्षमा करना कैसाहू कष्ट आनेपरभी धै-
र्य को न छोड़ना सदैव वस्त्र और शरीर को स्व
च्छ पवित्र रखना व्यवहार में सच्चा रहना

अन्तःकरणमें काम क्रोध अहंकारके भाव को न आनेदेना किसीसे दुःख पाने परभी उसकी बुराई न चाहना अपनी प्रशंसाकी इच्छा न करते हुये अपने मुखसे अपनी बड़ाई न करना दीनता सहित रहना अभिमान रहित बात करना यह सब लक्षण देवताओं के हैं मनुष्यको उचित है कि उक्त बातोंपर अवश्य ध्यानरखकर आचरणकरे। हे अर्जुन! अ-

पनेमें जरा तिनकाभर शायद् कोईगुण हैं उसको बारम्बार पर्वतकीभांति सबसे वर्णन करना धन व सामर्थ्यका अभिमान करके अहंकारयुक्त अपने समान दूसरेको न समझना अपनेसे बड़ेवृद्ध पुरुषोंसे व प्रतिष्ठित पुरुषोंको कुछन समझकर उनसेभी हीन न होना क्रोध ऐसा करना कि जिससें बुद्धि नष्ट होजाय सबसे कठोर बचन बोलना उत्त-

अ० १६

३८३

म अच्छे २ ख्याल न करना हे पार्थ ! उपरोक्त कहेहुये विचारके पुरुष असुरों की बुद्धि वाले असुरसृष्टि कहाते हैं। देवतोंकी प्रकृति मुक्तिकेलिये है और असुरोंकीसृष्टि मन बन्धनका हेतुहै इससे हे पाण्डव ! आप शोच न करिये कारण कि आपतो दैवी सम्पत्ति में उत्पन्न हुयेहैं। इस जगत में दो भांतिकी सृष्टि है दैव और असुरों देवता के गुण तो इस विस्तार

पूर्वक कहे हैं और असुरों के शूक्ष्म में कहे उस
को विस्तारसे कहतेहैं सोसुनिये धर्मऔर अ
धर्मका असुरलोग विचार नहीं करते उत्तम
आचारविचार और सत्यता उनमें नहींहोती
वेदकोझूठा औरजगतको अधर्माधर्मसेरहित
विना ईश्वर का कहते हैं कामदेव के कारण
स्त्रीपुरुषके संयोगसे उत्पन्न भयेहैं यही आप
नी सृष्टि मानतेहैं इस भांति का जिनका वि-

चारहैं यह हृदयके मलीन तुच्छबुद्धिवाले दु
ष्टकर्म करने वाले संसार भरके शत्रु नाशके
हीहित उत्पन्न हुये हैं। संसारी कामनायें जो
किसीसमय कभीपूर्ण नहींहोती उसका सहा
रा करके पाखंड और प्रतिष्ठाके अभिमानमें
भरेहुये [illegible]वस निन्दितचाल अंगीकारकर
के मलीनहृदयवाले दुष्टकर्मोंमें लगेरहतेहैं।
अबभाषा संसारीचिन्ता जो देहान्ततक क्या

प्रलयपर्यन्त तक समाप्त नहोवे उसीकोआ्रा
सुर कामके बड़ेभोगको ही उत्तम जानते हैं।
इसके सिवाय औरकुछ नहींहै यही निश्चय
रखते हैं। सैकड़ों क्या अनगिनती आशा के
फंदोंमें फंसेहुये काम औरक्रोध में सनेहुये इ-
न्द्रियोंके विषयहेतु धर्मअधर्मका विचार छो
ड़कर धन एकत्र करतेहैं। यहपदार्थ अब इ-
सनेपाया यहमनोरथ भी हमाराहोगा यहध

न तो हमारे पास है फिर इतना धन और बढ़ेगा। इस शत्रु को तो हमने जान लेलिया औरों को भी अब हम मारेंगे हम सामर्थी हैं भोग और कामनापूर्ण बलवान इस जगत में हमी हैं धनवान कुलीन कुटुम्बी मेरे बराबर दूसरा कोई नहीं है मैं यज्ञ करूंगा लोगों को दान दूंगा और हम प्रसन्न होंगे इस भांति आसुरी सृष्टिवाले अज्ञानता के कारण मोहबश होकर समझते

हैं अनेकतरहके बिचार करतेहुये शोचयुक्त चित्तमें भ्रमकिये मोहकेजालमें फंसे और इन्द्रियोंके भोगमें बंधेहुये अशुद्ध हृदयवाले नर्कमें पडतेहैं। अपनेको बहुतबडा समझनेवाले अभिमानी धनऔरमानके मदमें भरे हुये पाखंडी नामकेलिये विधिरहित यज्ञ करते हैं। हे अर्जुन ! ऐसेप्राणी अहंकारयुक्त बल और प्रभुताके अभिमानमें चूर्ण इन्द्रियोंके

विषयके लिये क्रोधपूर्वक मेरेसाथ और दूस-
रोंकोभी शत्रुबनाय वैरकरतेहैं उनको अज्ञान
वस दूसरेकीनिन्दा करना ही परम कल्याण
मय देखाता है। आसुरी योनि में प्राप्त होकर
अज्ञानी लोग अनेकन जन्ममेंभी मुझेप्राप्त
न होकर अत्यन्त निकम्मीही योनिमें वह उ
त्पन्नहुआ करतेहैं और मरकर नर्कमें जातेहैं
आत्माके नाशकरनेवाले तीनभांतिके (का

म क्रोध लोभ) द्वार हैं इनतीनोंको त्यागकर
नाहीं उचित है। हे कौन्तेय! इन तमोगुणरूप
तीनों नर्कके द्वारोंसे छूटकर मनुष्य अपने क
ल्याणहेतु जोचाल चलता है तो उसकीमुक्ति
होजातीहै। जोशास्त्रकी बिधिकोछोड़कर अ
पनीमतिसे यज्ञकरताहै उनको ज्ञानसुख मु-
क्ति कुछभीनहीं मिलतीहै। इसलिये शास्त्र
में जो कहीहुई विधिहै उसीके अनुरूप तुमा

रे लिये जो काम कह गये हैं उनको जानकर कार्य करना तुम्हारे लिये कल्याण दायक है और तुम भी करने के योग्य हो ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सुब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सम्वादे सम्पति विभोग वर्णनं नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

अथ गीताके सोलहवें अध्यायका माहात्म्य

श्रीमहादेवजी पार्वतीसे कहने लगे कि हे प्रिये गीताके सोलहवें अध्यायके महात्म्यको सुनो गुजरातदेशमें सौराष्ट्रिक नाम पुर है त-

हाँपर खड्गबाहु नाम राजा हुआ वह राजा अपनी श्रेष्ठ नीतिकेद्वारा सदैव प्रजाका पालन कियाकरता था उसकेयहां एक बडाभारीहाथी था वह अकस्मात् मदके अभिमानमेंपूर्ण बिगडउठा महावतों ने अनेकयत्न उसकेशान्त करनेकेलिये किया परन्तु वह मदघूर्णितहाथी एकनमानकर वहांसे निकल पड़ा समस्तशहर में चारोंओर हाहाकार मच

यथा कि राजा का हाथी आज पागल होकर निकलपडा है राजा खड्गबाहु भी देखनेके लिये राजमहलसे बाहरआये और उसहाथी को एकरास्तेमें कैदसा किया इतनेही में एक ब्राह्मण तालाबमें स्नानकरके गीताके सोल-हवेंअध्यायका पाठ करतेहुये आनिकले लोगोंने उनसे कहा कि इसमार्गमें बिगडाहुआ हाथीखडाहै आप इसरास्तेसे न जाइये दूसरे

किसी मार्ग से निकल जाइये ब्राह्मण देवता एकबातभी किसीकी न सुनकर सीधे चलेही आये और गीताके सोलहवें अध्यायका पाठ करतेहुये हाथीके निकटसे निकलेतो वह हा- थी शूंडसे कमलपकडेथा सो ब्राह्मण को देने लगा परन्तु ब्राह्मणने नहींलिया और पाठक- रतेहुये सीधे चलेआये इधर राजा खड्गलिहुडु सवारीपर स्थितथा उसने ब्राह्मणको देखके

र बुलवाया और वाहनसे उतरकर राजाने ब्रा
ह्मण को प्रणामकर कहा कि हे देव! आप
प्राणोंकाभय न मानकर इसरास्तेसे चलेआ-
ये आप कौनसा मंत्र जानते हैं या किसदेवता
का पूजन करतेहैं जिसके प्रभावसे मदघूर्णित
हाथी का आपने भय नहीं माना और उसके
सामनेसे बाहर निकल आये तब ब्राह्मण ने
कहाकि हे राजन् मैं गीताके सोलहवें अध्याय

कापाठ करताहुआ जबहाथीके निकटसें नि-
कलातो हाथी अपनी शुंडसे कमल देनेल-
गा उसकोभी मैं परवाह न करके पाठकरता
चला आयाहूं तबतो राजा ब्राह्मणको अपने
मकानमें लेआये और आदरपूर्वक बैठाय पू-
जनकिया और गीताके सोलहवें अध्यायको
पढा और राज्यसुखको तुच्छमानकर पुत्रको
राज्यगद्दीमे बिठाकर आप गीताके सोलहवें

अ०१६ १०१८

३१७ ४६१

अध्यायका जप करने लगे और कुछ समयके बाद मृत्युको प्राप्त होकर परमगतिको पागये।

इति पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीश्वर संवादे गीतायां षोडशोऽध्यायः माहात्म्य समाप्तम् ॥ १६ ॥

अथ सप्तदशोऽध्यायः प्रारम्भः।

अर्जुनने कहाकि हे कृष्ण! जोलोग शास्त्र की विधिको छोड़कर श्रद्धायुक्त यज्ञादि शुभ कार्यकरते हैं उनकी सत्व रज तम इन तीन गुणोंकी निष्ठा है सो मुझसे कहिये। श्रीभगवा

न कृष्णचन्द्रजी ने कहाकि शरीर धारियोंमें सात्विकी राजसी तामसी तीन प्रकारकी स्व भाव वश निष्ठा होती है सो सुनो हे भारत ! सबकी श्रद्धा सतोगुण के अनुसार ही होती है जैसी जिसकी श्रद्धा होती है वह वैसाही होता है। सतोगुणी देवतोंका यज्ञ करतेहैं रजोगुण वाले यक्ष राक्षसोंको पूजतेहैं तामसीलोग प्रेत भूत बैतालोंके समूहको परम पूज्य मानकर

अ०१७ १०१८

३१६ ४६१

इन्हींका पूजन किया करते हैं। जोलोग शा-
स्त्रकी आज्ञाको न मानकर हठबस जंगलमे
जाय अहंकारयुक्त कामनाकी इच्छा करके त
पस्या करतेहैं वह पाखण्डी हैं। जो अज्ञानी
लोग शरीरके पांचोभूतोको और इन्द्रियोको
दुखदेतेहैं और मुझको जो मैं उनके हृदय मे
थितहूं उसे कष्टदेतेहैं उनको निश्चयही असुर
जानो। आहार सबको तीन भांति का प्रिय

होता है यज्ञ तपस्या दान भी तीन प्रकार का
है उसका भेद सुनो। जिस भोजन से आयु-
ष्य उत्साह सामर्थ्य आरोग्यता सुख प्रीति
इच्छा पूर्वक स्वाद बहुत समय तक गुणकर
ने वाला मन भावता ऐसा भोजन सतोगुणी
को प्रिय होता है। कडुवा खट्टा सलोना अति
गर्मभार करने वाला जलाहुआ आहार रजो
गुणी लोगों को प्यारा है सो भोजन दुःख शो

करोगके बढ़ाने वाला है। बहुत समय का बनाया हुआ जिस भोजन का स्वाद जातारहाहो दुर्गन्धियुक्त किसीका भी जूठाहो जो खानेके अयोग्य होवे ऐसा भोजन तमोगुण वाले पुरुष को प्रिय होता है। शास्त्र के अनुकूल विधिसे फलकी कामना छोड़कर यह यज्ञ करना चाहिए ऐसा विचार करके जो यज्ञ किये जाते हैं वह सतोगुणी यज्ञ है जो

फलका आसरा करके केवल फलकेलिये जो यज्ञ होता है वह यज्ञ हे भरतपर्भ ! राजसी (रजोगुणी) जानिये और जो यज्ञ विधिसे रहित उच्छिष्ठ अन्न द्वारा मंत्र दक्षिणा श्रद्धासे रहित है उसको तमोगुणी यज्ञ कहते हैं हे अर्जुन ! अब तुम तीन प्रकार का तप है सो सुनिये देवता ब्राह्मण गुरुपंडितों की सेवा पवित्रता आधीनता ब्रह्मचर्य से रहना हिंसा

अ०१७ १०१८ ४०३ ४६१

रहित जो तप है वह शरीर का तप कहाजाता
है । जो बात किसीको बुरी न लगे सच्ची औ
र प्यारी व गुणदायक होवे उसका बोलना
वेद का पाठ करना यह बाणीका तप कहला
ता है । मनकी प्रशन्नता और आधीन होकर
मित्रता रखना मौन रहना आत्माका ध्यान
करना मनको विषय बासना से रोकना सदैव
पवित्रता हृदय में रखना उसी तपको मानस

तप कहतें है । पूर्ण श्रद्धासे एकाग्रमन द्वारा
फ़लकी इच्छा छोडकर जो मनुष्य तीनों प्र-
कारके तप करता है वह तप सतोगुणी कहाता
है । जो तप सन्मान और अपनेको बडा कह
लाने के लिये पाखराडसे युक्त किया जाता
है वह तप सदैव स्थिर न रहने वाला रजोगु-
णा युक्त कहलाता है । अज्ञान और हठकर-
के अपने शरीर और इन्द्रियों को दुःख देकर

अ०१७

४०५

दूसरे के पीडा (दुःख) देनेके हेतु जो तप क
करते हैं वह तामसी तप कहाता है । देनेही के
योग्य है शास्त्र की आज्ञासे दान करना अव-
श्य है और दान करने का पदार्थ निर्दोष है
तो बिना उपकार किये हुये पुरुष को (जि
ससे अपना कोई अर्थ नहीं है उससे कार्य सि-
द्ध नहीं करना) उत्तम समय में सुपात्रको जो
दान दिया जाता है वह दान सतोगुणी जानि

ये । जो दान फलकी इच्छासे अथवा जिसको
दान दिया उस पुरुष से कोई काम कराना है
यह विचार कर जो दान किया जाय और उ-
स दानका पीछेसे विचार हो कि इस मनुष्य से
तो हमारा कोई कार्य नहीं होता है ऐसा दान
रजोगुणी कहाता है । बिना देश काल का
विचार किए कुसमय में बिना सत्कार और
अनादर के साथ जो दान अभिमान युक्त

होता है वह दान तामस कहाता है । हे अर्जु-
न ! अकार ओकार मकार तत् सत् यह एकमें
मिलाने से ॐ तत्सत् ऐसा शब्द होता है सो
ई यह तीन नाम ब्रह्मके कहे गये हैं और इ-
न्हीं के द्वारा प्रथम ब्रह्माने वेद और यज्ञको
रचाहै इसी कारण से ब्रह्मवादी लोग सदा
प्रथम प्रणव ॐ तत्सत् का उच्चारण करके
वेद की कही हुई रीति से यज्ञ दान तप करने

लगते हैं । तत् यह शब्द उच्चारण करके फ-
लकी इच्छाविना युक्तिके चाहने वाले नाना
प्रकारके यज्ञ दान तप आदि शुभ कर्म करते
हैं । हे पार्थ ! सच्ची भावना और उत्तम श्र-
द्धासे सत् शब्द का उच्चारण करते हुये उत्त
म कार्य वेदवेत्ता जन करते हैं । यज्ञ दान तप
में दृढ और स्थिर रहना सत कहाता है उसके
अर्थ जो कर्म कियाजाय वहभी सत कहाता

है । विना श्रद्धाके जो अग्निमें हवन किया या किसी भांति का तपही किया तो वह तप या उत्तम कार्य हवनादि असत् कहाता है और वह सभी कार्य न इसलोक के हैं न परलोक के हैं इसलिये सब धर्म कर्म पूर्ण श्रद्धा सेही करना उचित है उसके करने वालेका कल्याण है ।

इति श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे कृष्णार्जुन संवदे त्रिगुण विभाग योगोनाम सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

अथ गीताके सत्रहवें अध्याय का माहात्म्य

श्री महादेवजी बोले कि हे पार्वती ! अब तुम सत्रहवें अध्याय का महात्म्य सुनो राजा खड्गबाहु के पुत्र का नौकर दुःशासन नामक था वह उस मत्तहाथी को पकड़नेके लिये बडी बडी बातें कहकर अति अभिमानसे दौडकर मत्त हाथीपर चढगया तो हाथी को बड़ा क्रोध आया और एक पैर से दाबकर चूर

चूर करदिया तबतो वह मरकर मत्तहाथी की
वासना से बँधाहुआ सिंहलद्वीप के राजा के
यहां हाथी की योनि में उत्पन्न हुआ परन्तु
मतवाले हाथी की वासना के कारण कितने
ही यत्न करने पर भी वह मतवाले की भांति
रहता था तबतो सिंहलद्वीप के राजा ने उस ह
थी को अपने मित्र राजा खड्गबाहु के यहां
जलमार्ग द्वारा भेजदिया राजाने आदर पूर्व

क उस हाथीको लेकर हाथी खाने में बँधवा दे
या वह मत्ता हाथी अपने पूर्व जन्मका हाल
स्मर्ण करके दुःखी रूपसे रहने लगा कुछ स-
मय के बाद राजा खड्गबाहु ने किसी ब्राह्म
ण पर प्रसन्न होकर वह हाथी देदिया ब्राह्म
ण देवता हाथी तो लेगये परन्तु पालने की
सामर्थ्य कहाँ उस ब्राह्मणने हाथी राजा मा
लव के हाथ बेंच दिया वह हाथी अपने पूर्व ज-

न्म को स्मर्ण करता हुआ सदैव खिन्नमन पागल की भांति कुछ दिन वहांपर रहा परन्तु काल समय आनेसे उसको ज्वर आया। महावतों ने राजाको खबर किया राजा स्वयं आकर हाथी को देख विचार करने लगे तो हाथी के आंसू बह रहे हैं और अत्यन्त दुःखी है। राजाने हथवानों से कहा कि दवाका इन्तजाम करो इतना सुनतेही वह हाथी घुर्राकर बो-

ला कि हे राजन् ! मेरेलिये औषाध वैद्यका इन्तजाम न करिये किसी अच्छे ब्राह्मणको बुलाकर मुझे गीताके सत्रहवें अध्याय को सुनवाइये उसी से मेरा रोग छूटकर मुझे कल्याण मिलेगा । तब तो राजा ने अति प्रशन्न होकर वैसाही किया तो वह हाथी हाथी के रूपको छोड़कर इन्द्रसमान तेजस्वी होकर विमान में चढ़गया तब राजा नरवर्म्मा बोलाकि

हे देव आपके पूर्व जन्मका क्या वृत्तान्त है सो मुझे सुनाइये जब इस भांति राजा ने पूछा तो विमुक्त और विमान मे चढे हुये दुःशासनने अपने पूर्व जन्मका पूर्णहाल कहसुनाया और राजाके देखतेही स्वर्गको चलागया तबतो मालव राजा नरवर्मा भी गीताके सत्रहवें अध्यायको जपकर थोडेसमय बाद मुक्त होगये।

इति पद्मपुराणे उत्तरखण्डे सतीस्वर संवादे गीतायां सप्तदशोऽध्यायः माहात्म्य समाप्तम् ॥ १७ ॥

अथ अष्टादशोऽध्यायःप्रारम्भः ।

अर्जुन ने कहा कि हे महाबाहो ! हे हृषीके
श ! सन्यास का तत्व और त्याग के विषय को
अलग अलग जानने की मेरी इच्छा है हे के
शिनिषूदन ? सो आप मुझपर दयाकरके वर्ण
न करिये । श्रीकृष्णचन्द्र भगवान ने कहा
कि सकाम कर्म के छोड़ने को पण्डितों ने स
न्यास कहा है और सब कर्मों के फलकी इ-

इच्छाको छोडना वही त्याग कहा गया है। को-
ई शास्त्र कर्म को दोषकी भांति जानकर त्या-
गने को कहते हैं और कोई शास्त्र यज्ञ दान
तप आदि को त्यागने के लिये नहीं कहते इ-
स द्विविधा में मेरा यह मत है कि हे भारत स-
त्तम ! अर्जुन त्याग तीन प्रकार का यज्ञ दान
तप यह मनुष्यों के अंतःकरण को शुद्ध कर-
ने वाले हैं इससे इनका त्यागना योग्य नहीं है

परन्तु इन कर्मों को करते हुये किसी भांतिके फलकी इच्छा न करे यह मेरा पक्का निश्चय है । हे अर्जुन ! नित्य नैमित्तिक सन्ध्योपासनादि कर्म को त्यागना कभी भी नहीं चाहिये अगर प्रमाद (अभिमान) वस किसी ने त्याग दिया तो वह तामसी त्याग कहाता है शरीर के दुख के भयसे और कर्म को दुःख समझकर जो त्याग करता है वह राजसी त्या

ग कहाता है कि जिस त्याग का फल उसे कु
छ भी नहीं मिलता यह काम करना ही चा
हिये ऐसा विचार करके जो नियत कर्म
करता है और करने का अभिमान व क-
र्म के फलकी इच्छा का त्याग करे तो हे अर्जु
न ! वह त्याग सतोगुणी कहलाता है। सतो-
गुणी बुद्धिमान संशय रहित त्यागी जो पुरुष
है वह दुःखदाई कर्मोंसे दुःखी और सुखदाई

पदार्थों से सुखी व मन की आसक्ति नहीं रख

ते देह धारी मनुष्यादि समस्त कर्मों को नहीं

त्याग कर सके जो कर्म के फल के त्यागी हैं

वही त्यागी कहाते हैं भले और बुरे तथा दो-

नों से मिले हुये कर्म के फल तीन प्रकार के हैं

जो त्यागी नहीं हैं उन्हीं को मिलते हैं और स

न्यासीयों को कभी नहीं मिलते । हे महाबा

हो यह पांच कारण समस्त कामों के पूरे हो-

नेके हेतु जो सांख्य शास्त्र और वेदान्त में कहे हैं उनको भी जान लीजिये । शरीर कर नेको अभिमान अथवा जीव इन्द्री और इ-न्द्रिय के विषय अलग अलग तथा अनेक प्रकार के कर्म प्राण अपानादि से कर्म और ब हुत भांति की चेष्ठा प्रारब्ध यह पांचों सभी क्रियाओं के कारण हैं। शरीर वाणी और मन से जो उत्तम यानी कृष्टकर्म मनुष्य प्रारम्भ

करताहै उसके यहहेतुहैं। जो पुरुष किसीभी
कर्मके करनेमें अहंकार नहींकरता और उस
कीबुद्धि आत्माकोकर्ता नहीं मानती ऐसी
निष्ठाकाज्ञानी समस्त जगतकोभी मारडाले
तौभी उसे मारडालनेका पापनहींलगता ज्ञा
न और जाननेयोग्य वस्तु ये जाननेयोग्य कर्म
की प्रेरणा तीन भांतिका है करण कर्म कर्त्ता
यह तीन प्रकार के कारक हैं। हे अर्जुन! सां

रुय शास्त्रमें ज्ञान कर्म कर्त्ता तीन प्रकार के कहे गये हैं उनको भी जानलीजिये। समस्त जगतमें एक खराड ब्रह्मको प्रकाश जो देखता है और सब प्रकार के जीवों को एकाकार जानता है उसको सतोगुण युक्त ज्ञानी कहते हैं और जो अलग अनेक प्रकार का जो ज्ञान सर्व वस्तु में जानता है सो राजसी ज्ञान है। जो एक मूर्ति की पूर्ण की भांति व्यर्थ ही

निश्चय कर्ता है उस अग्यानी पुरुष की बुद्धि
को तामसीज्ञान कहते हैं। अभिमान रहित
राग द्वेष को छोड़कर जो बिना प्रयोजन क-
र्म किये जाँय वह सतोगुणी कर्म कहातेहैं जो
कामना पूर्णहोनेकी आशासेयुक्त अहंकार
सहित आतक्लेश और दुःखसे जो कर्म कि-
या जाय वह राजस कहाता है जो कर्म करने
के पीछे बंधन का हेतु होवै हानिकारक और

१८ ०१८

४२५ ४६१

दूसरे को दुःखदाई सामर्थ्य के विचार को छो
ड़कर भ्रम और अग्यानसे कियाजाय वह क
र्म तामसी कहाताहै। फलकी इच्छाको छो
ड़कर नम्र भावसे युक्त धैर्य और उत्साह स-
मेत कार्य पूरा होवै या अधूराही रहजाय पर-
न्तु उसमें सुख दुःख को न मानै ऐसा कार्य
कर्त्ता सतोगुणी कहाता है इन्द्रियों के विषय
में प्रीति रखनेवाला कर्मके फलको चाहने

वाला लालची और स्वभावसे दुःखदाई भीतर और बाहर से अशुद्ध हर्ष और शोक से परिपूर्ण हुआ ऐसा कर्त्ता राजस कहाता है। धर्म के श्रद्धा से रहित विषय में लगा हुआ कर्म फलकी श्रद्धासे हीन भक्ति रहित मूर्ख अहंकारी धोखा देनेवाला आलसी सं देह युक्त कर्ता तामसी कहलाता है। बुद्धि और धारणाशक्तिके भी गुणोंके अनुकूल ती-

अ०१८ १८

४२० ३८१

न भांतिकी है उनको सुनिये। हे अर्जुन स्वध
र्म में रहना और अधर्मको त्याग करना कर
ने योग्य और न करने योग्य कर्मका विचार
करना भय अभय बंधन मोक्षको जो जाने
उसी पुरुष की बुद्धि सतोगुणी है। जिस बुद्
से धर्म अधर्म कार्य अकार्य का विचार न कि
याजाय हे अर्जुन! वह बुद्धि राजसी है। त
मोगुणसे युक्त बुद्धिवाले सदैव अधर्म को

धर्म मानते हैं और सदैव सभी बातों को उल-
टाही समझते हैं उसको तामसी बुद्धि कहते
हैं। जिस धारणाशक्ति से मन प्राण इन्द्रिय
क्रिया चित्तकीवृत्ति आदिको जो रोकसक्ता
है कि किसी कुमार्ग में न लगजावे हे पार्थ!
उसी पुरुष की धारणाशक्ति सतोगुणी है ।
जिस धर्मशक्ति से धर्म काम अर्थ को धारण
करके अहंकार पूर्वक फल चाहते हैं वह रजो

गुणी धारणा है । जिस प्रकृतिके स्वभाव से निद्रा भय शोक पछतावा और अहंकार को दुष्टबुद्धि वाले नहीं छोडते वह धृति तामसी है । हे भरतर्षभ ! तीन प्रकार के सुख भी होतेहैं उनको सुनो जिस सुखमें अभ्यास करनेसे मन लगता और दुःख समाप्त होजाता है जो सुख पहिले विषकी भांति और पीछेसे अमृत के समान हो जावे वह सुख सतोगुणी

कहाता है इन्द्रिय और उनके विषयके संयो-
गसे जो सुख पहिले अमृतके समान और अ
न्तमें विष की भांति होजावै वह सुख रजोगु
णी कहाता है जो सुख रजोगुणी कहाता है
जो सुख आदि और अन्तमें भी मन व बुद्धि
को मोह जालमें फँसादे और निद्रा आलस्य
प्रमादसे जो सुख होता है वह तामसी कहाता
है। भूलोक अथवा देवलोक अथवा देवतोंमें

अ०१८

१०१८

४२६

४६१

भी ऐसा कोई नहीं है जो प्रकृति से उत्पन्न तीनों गुणों से छूटा होवे । हे परंतप ! ब्राह्मण क्षत्री वैश्य और शूद्रों के स्वभाविक कर्म भी अलग अलग हैं उनको सुनिये । शम-मन को रोककर एकाग्र करना दम-इन्द्रियों को उनके विषय हटा देना तप-देवता गुरु ब्राह्मण विद्वान सन्यासी की सेवा करना और शरीर को मैलसे व हृदय को मैलसे शुद्ध रखना

अ०१८

थोड़ा भोजन करना शौच-बाहरका शौच श
रीर और वस्तु व घरका स्वच्छ (साफ) रखना
तथा भीतर का शौच काम क्रोध लोभ मोह
मद मात्सर्य अभिमानादिको दूरकरना शा-
न्ति दुःख पहुँचने पर भी मनको उदासीन
न करना और बदला लेनेकी शक्ति होनेपर
भी क्षमा करना आर्जव-निन्दित चालको
छोड़कर सीधी चाल चलना और सबसे नम्र

४३२

ता करना ज्ञान शास्त्र को पढकर ब्रह्मज्ञान
का विचार करना विज्ञान अपने मनके अनु-
भवसे हृदयमें सर्वरूप परमेश्वर को सच्चा
निश्चय करना आस्तिक्य-परमेश्वर के सत
भावमें और उसकी आज्ञामें पूर्ण निश्चय
करना यह कर्म ब्राह्मण के स्वभावसे उत्पन्न
होते है। शौर्य युद्धमें मनको दृढ रखना ते-
ज-शत्रुको प्रतापवान और बलवान दिखाई

देना धृति-अत्यन्त घोर विपत्ति में भी मन-
को स्थिर रखना दाक्ष्य-सब कामों के करने की
रीति भलीभांति जानकर उसे मन लगाकर
पूर्ण करना युद्धेचाप्य पलायनम्-युद्ध से
मुहँ छिपाकर न भागना दान-प्रसन्न चित्त
धर्म्म द्वारा इकट्ठा किया हुआ धन उत्तम पात्र
को उत्तम देश और उत्तम समय में आवश्य
क जानकर देना अथवा किसी दुःखी और भ

यातुर को शरणदेना ईश्वर भाव प्रजाको ध
र्मानुकूल रक्षा करना और दुष्टोंको दण्डदेना
यह कर्म क्षत्रीके स्वभावसेही उत्पन्न होतेहैं
खेती करना गौ आदि पशुओं को पालन कर
ना व्यापार यह कर्म वैश्यके स्वाभावसे होते
हैं । तीनों वर्णों (ब्राह्मण क्षत्री वैश्य) की से,
वा करना यह कर्म शूद्रके स्वभावसेही होतेहैं
अपने२ वर्णोंके अनुकूल कर्म करते हुये मनु-

ष्य परमसिद्धि को पातेहैं। अपने कर्म में मन लगाने से जो सिद्धियां मिलती हैं उनको हे अर्जुन! सुनो। जिसके द्वारा सब जगत की उत्पत्ति है वही सब जगतमें व्यापक है उस ईश्वर का अपने अपने वर्णानुकूल पूजनकरने से मनुष्य सिद्धिको प्राप्तहोतेहैं। अपनाधर्म अधूराभी दूसरेके अच्छे और पूर्णधर्मसे कल्याणकारीहै। अपने २ वर्णानुकूल स्वभाव

जकर्म करनेसे मनुष्यको पापनहीं लगताहै।
हे कौन्तेय! अपना स्वाभाविक कर्म जो दोष
युक्त भी हो तोभी उसको न छोडे संसार
में जितने कर्म हैं उनके आरम्भ में कुछ न कु
छ दोष अवश्य मिले रहते हैं जैसे धुवां से अ
ग्निमिली है या ढकी रहती है उसी भांति स-
म्पूर्ण कर्म को दोषयुक्त जानिये। जिसकी
बुद्धि सब पदार्थों से ममता रहित और मन स

हित सब इन्द्रिय वस में होवै साथही किसी पदार्थ की इच्छा न होवै तो सन्यास के बल से सब कर्मों के नाशकी सिद्धि को पहुंचता है। हे कौन्तेय! जिस भांति ब्रह्म को सिद्धि मिलती है और जो ज्ञानकी पूरी निष्ठा है उसको मैं संक्षेप से वर्णन करताहूं सो सुनिये शुद्ध बुद्धि और धारणा शक्ति से अपने मनको दृढ़ करके शब्दादि विषय को त्याग

अ०१८

४३६

कर राग और द्वेष दोनों को दूर करे एकान्त
वासी थोड़ा भोजन करनेवाला जिह्वा श-
रीर और मनको जीतनेवाला ध्यानमें लगा
हुआ वैराग्यमें पूरा आसरा करनेवाला अभि
मान शक्ति दूसरेको धमकाना काम क्रोध
और धनका इकट्ठा करना इन अनर्थों को
छोड़कर अहंभाव और ममता से रहित शां-
न्त पुरुष ब्रह्म होनेके योग्य है तब वह ब्रह्म

रूप प्रसन्न मनसे न कुछ शोच करता है न कुछ इच्छा करता है सम्पूर्ण जगतमें नारायण को समान जानकर मेरी अनपावनी भक्तिको पाता है हे अर्जुन ! भक्तिके द्वारा मेरे यथार्थ रूपको जान सकता है तब वह मेरेमें मिलजाता है। मेरी प्राप्तिकी इच्छासे सब कर्मोंको करते हुये मेरी प्रसन्नता से नाश रहित शाश्वत पदको पाता है। हे अर्जुन ! स-

च्चे मन से सब कर्म्म मेरे अर्पण करके मु
झमें मन लगाओ और बुद्धियोग का
आसरा करके मेरेही पर चित्तधरो मुझ
में चित्त लगाने मेरी प्रशन्नता द्वारा स-
र्वविपत्ति और कठिनाइयों से पार होजाओ
गे यदि अहंकार से बातको न सुनोगे तो अपने
परिश्रम को नाश करोगे जो अहंकारसे मम
तावश यह समझोगे कि हम न लड़ेंगे तो यह

परिश्रम तुम्हारा झूठाही हुआ और प्रकृति तु
म्हारी उसमें लगादेगी । हे कौन्तेय ! स्वभाव
से प्रकृति उत्पन्न भई वह प्रारब्ध कर्म से बँ-
धीहै जो तुम अज्ञान वश नहीं किया चाहते
हो तो परवश होकर करोगे । हे अर्जुन ! सब
जगत के हृदय में ईश्वर विराजमान होकर स
ब जगतको अपनी मायासे पुतली की भांति
घुमाता है इसलिये हे भारत ! सब भावसे उ-

मीकी शरण में जाव कि जिसके प्रसाद से परे
शांती और शाश्वतपद पाओगे हमने तुमसे
गुप्तसे भी गुप्त उत्तम से उत्तम ज्ञान कहादि
या इसको भली भांति विचार करके जैसा चा
हो वैसा करो छिपेसे भी छिपा हुआ मेरा सू-
क्ष्मज्ञान जो तुम मेरे मित्रहौ और पूर्ण बुद्-
धिमानहैं तुमारे भले के लिये कहता हूं मुझ
में मन लगाओ मेरे भक्त हो मेरायज्ञ और

पूजा करो मुझको प्रणाम करो तो मुझ

मैंही मिलजाओगे यह सच्ची प्रतिज्ञा तुमसे

कहताहूं कारण कि तुम मेरे प्यारे हो समस्त

धर्मों को छोड़कर एक मेरी शरण में आओ

हम तुमको सब पापोंसे छुड़ालेंगे इसका कु

छभी शोच न करो यह गुप्त भेद जो पुरुष

तपस्या नहीं करते और मेरे भक्त नहीं है

और जो मेरी आज्ञा नहीं मानते मेरी निन्दा

अ०१८

४४५

करते हैं उनसे तुम कभी यह ज्ञान न कहना
जो इस उत्तम भेद को मेरे भक्तों से कहोगे
तो वह मेरी पूर्णभक्ति करके निस्संदेह मुझ
को प्राप्त हो जावेंगे। गीताशास्त्र के पढ़ने सु
ननेवाले मनुष्यों से मुझे कोई प्रसन्न करने
वाला इस पृथ्वी में नहीं है न होगा और न
कोई हमको उससे अधिक प्यारा है। हमारा
और तुमारे इस धर्म सम्वाद को जो पढ़ता है

वह हमारे मति में ज्ञान यज्ञ द्वारा मेरी पूजा करता है श्रद्धा भक्ति से युक्त निन्दा रहित जो मनुष्य इस गीता शास्त्र को सुनता है वह समस्त पापों से छूटकर उत्तम पुण्य करने वालों के लोक में प्राप्त होता है। हे पार्थ! क्या आपने एकाग्र मन करके इस गीता शास्त्र को सुना और हे धनंजय! आपका अज्ञान रूपी माया मोह जाता रहा कि नहीं? अर्जु

न ने कहा कि हे श्रीकृष्ण ! आपकी कृपा से अब मेरा मोह रूपी अन्धकार जाता रहा और कर्तव्य कर्म की स्मृति प्राप्त हुई अब मैं क्षत्रिय धर्मानुसार आपकी आज्ञा से निस्सं- देह युद्ध करूंगा। संजय ने राजा धृतराष्ट्र से कहा कि हे राजन् ! इस भांति श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन का रोमाञ्चकारी अद्भुत सम्वाद श्रीव्यासजी की कृपा से श्रीकृष्णचन्द्र के मुख

स कहते हुये यह परम गुप्त ज्ञान मैंने सुना है
हे राजन् ! श्रीकृष्णचन्द्र और अर्जुन का य
ह अद्भुत पुण्यकारी सम्वाद स्मरण करके मैं
बारम्बार आनन्दित होता हूं ! वह हरि भग
वान् का अद्भुतरूप स्मरण करके मुझको ब-
ड़ाविस्मय हो रहा है हे राजन् ! मैं बारबार
अत्यन्त प्रसन्न हूं । जहांपर योगेश्वर श्री-
कृष्णचन्द्र जी हैं और जहांपर गांडीव धनुष

को धारण करनेवाले अर्जुन हैं वहीं हे राजन्
श्री विजय ऐश्वर्य और अटल नीति है यह मे
री निश्चित मति है । तात्पर्य यह है कि जिस
पक्षमें श्रीकृष्णजी हैं उसी ओर विजय होवे-
गी आपके पुत्रों की जीत नहीं होगी जिस प
र भगवान् की कृपा होती है संसार में उसके
सबही मनोरथ सिद्ध होते हैं और वह सदैव सु
खी रहकर अन्तमें परमानन्द पदको पाता है

हे राजन् ! यही मेरा अटल सिद्धान्त है ।

श्रीभगवद्गीता सूपनिषद्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुन सम्वादे मोक्ष संन्यास योगोनाम अष्टादशोऽध्यायः समाप्तः ॥ १८ ॥

अथ गीताके अठारहवें अध्यायका माहात्म्य

श्रीमहादेवजी पार्वती से कहने लगे कि हे प्रिये श्री नारायणके पदको देनेवाला यह गीता के अठारहवें अध्याय का माहात्म्य कहता हूं उसे ध्यान धरके सुनो मेरुपर्वत के ऊपर अमरावती नामपुरी है जिसको हमारी प्रशं-

नता के हेतु विश्वकर्मा नें रचाथा यहपुरी अ-
नेक गुणोंसे युक्त सदैव रहती है जहांपर क-
रोडों देवता तेज के समूह बास करते हैं जहां
पर चिन्तामणि के शिलाओं से युक्त काम-
ना के देने वाले महल है जहां कल्पवृक्ष की
छाया में सुख से बैठीहुई श्यामला इन्द्राणी
गन्धर्वों की स्त्रियोंके वाणियो से गीत सुनती
थी जहां पर कल्लोल करती हुई गंगाजी वह

रही है ऐसी मोक्ष सदृश पुरी में प्रथम एकसौ
यज्ञ करनेवाले इन्द्र हुये और इन्द्राणी युक्त
सुख पूर्वक राज्य कर रहे थे कि श्रीनारायणजी
के दूतोंको संग लिये हजार नेत्रवाले किसी
पुरुष को आते हुये इन्द्रने देखा और वह ज्यों
ही सामने आया कि इन्द्र का तेज नष्ट होग-
या और इन्द्र मणि सिंहासन से शीघ्रही स्था
न मंडपमें गिरे जब इन्द्र सिंहासनसे अलग

होगये तब भगवान के दूतों ने देवताओं का रा
ज्य नये इन्द्र को समर्पण किया और इन्द्र का
नया अभिषेक हुआ तब इन्द्राणी शीघ्रही बा
सभागमें बैठतीभई और देवतालोग बजाओं
को बजाने लगे ऋषि लोग वेद मंत्र से आ-
शीर्वाद देने लगे रम्भादि अप्सराएँ नृत्य
और गन्धर्व लोग गान करने लगे इस प्रकार
नवीन इन्द्र को अभिषेकित पूर्व इन्द्र देखकर

विस्मय में प्राप्त होकर बोले कि मैंने राह में तालाव नहीं बनवाये राहियोंके लिये मार्गमें बड़े २ वृक्ष नहीं लगवाये त्रिपुर भैरव देवके कभी दर्शन नहीं किये निधिवास में स्थित मदालसा देवीको नहीं पूजन किया मेघों के सदृस श्यामवर्ण शार्ङ्ग धनुषधारी भगवान केदर्शननहीं किये तीरथमें स्नाननहीं किया काशीपुरीको कभी नहींगये देवबागमें बसने

वाले नृसिंह जीके दर्शन नहीं किये एरखड
विष्णु हेरम्बजीकी सेवा नहीं किया पुरके ब-
सनेवाला रेणुका माताका दर्शन नहींकिया
त्रिपुरमें त्रिलिङ्गजी और त्र्यम्बक जी महा-
देवका भक्तियुक्त दर्शन नहीं किये रेवापुर में
घुस्टशेश देव नागनाथ पर्णग्राम में स्थित
अमृतेश्वर तुंगभद्रा नदी के किनारे हरिहर
नाथ बेङ्कट पहाड़में श्री निवासजी और का-

वेरी नदी के तटपर श्री रंगजी के दर्शन नहीं
किये रोते हुये दीन अनाथोंको कारागार से
नहीं छुड़ाया दुर्भिक्ष में अन्नदान प्राणियों
को नहीं दिया जल रहित मार्ग में पौसारा
नहीं बनवाय गौतमी नदीमें स्नान नहीं कि-
या तीर्थों और गावों में यज्ञ नहीं किया ब्रह्मा
विष्णु महादेवजी के मन्दिर कहीं नहीं बन-
वाया भय से व्याकुल शरणागतों की रक्षा

अ०१८

४५७

कभी नहीं किया इस भांति मनमें अपना विचार करतेहुये इन्द्र श्रीनारायण जीके शरण में जो क्षीरसागरमें शयन कर रहे थे वहां पहुंचे और साष्टांग दण्डवत करके इन्द्रासनसे भ्रष्ट हुये इन्द्र अति दुःखित स्वरसे नारायण की अनेक भांतिसे स्तुति करने लगे और प्रार्थना किया कि हे अच्युत ! हमने पूर्ण एक सौ अश्वमेध यज्ञ को करके इन्द्रासन

पाया था इस समय कोई नवीन इन्द्र हुआ
है उसने न तो कोई उच्च धर्म किया और न
कोई यज्ञ ही किया तिसपर भी हमारे दिव्य
सिंहासन को कैसे लेलिया । श्री महादेवजी
ने पार्वती से कहा कि हे प्रिये ! इस प्रकार इ-
न्द्र की कही हुई वाणी को सुनकर नेत्रोंको
खोल भगवान मीठे स्वर से बोले कि थोडे फ
ल देने वाले दान तपस्या और यज्ञों से क्याहै

क्या पृथ्वीतल में वर्तमान होकर पहिले तुम
ने क्या मुझे प्रसन्न किया था ? तब इन्द्र
बोले कि हे भगवन् ! किस कर्म से उस ब्राह्म-
ण ने आपको प्रसन्न किया कि जिससे हमारे
पद को आपने उसे देदिया । तब श्रीनाराय-
ण जी बोले कि हे इन्द्र वह गीता के अठारहें
अध्याय को वह पांचवार नित्य पढ़ता था
जिस पुण्यसे तुम्हारे उत्तम साम्राज्य (इन्द्रा

सन) को प्राप्त हुआ है । श्रीनारायण के व-
चन सुनकर इन्द्र लज्जित हुये और गीता के
पांच श्लोक जपने की विधि जानकर इन्द्र
क्षीर सागर से चल दिये और ब्राह्मण का वेष
धरकर गोदावरी नदी के तटपर आकर देखा
कि एक मुनि वेद के पारगामी ब्राह्मणदेव
कालेश्वर महादेव के मन्दिर के निकट विराज
मान हैं । ब्राह्मण रूपधारी इन्द्रासन से च्यु-

तइन्द्र उनके पासआकर मुनिजीको प्रणाम किया उस समय मुनिजी गीता के अठारहवें अध्याय का पाठ कर रहे थे वहां पर इन्द्र ने सावधान चित्तसे बैठकर गीता के अठारहवें अध्यायको सुना और पढ़ा तबतो वहइन्द्रास नसे हटेहुये इन्द्र उस पुन्यके प्रभावसे इन्द्रादि देवतों के छोटे छोटे पदको त्यागकर विष्णु भगवान की सायुज्यता (बराबरी) को प्राप्त

होजाते भये। इससे मुनियों का यह परमतत्व उत्तम दिव्य अठारहवें अध्याय का माहात्म्य हमने आपसे कहा कि जिसके सुननेही मात्र से सब पापों से मनुष्य छूट जाता है।

इति श्री पद्मपुराणे उत्तरखण्डे श्री सतीस्वर संवादे गीतायां अष्टादशोऽध्याय माहात्म्य नाम सप्तमः ॥ १८ ॥

श्रीकृष्णार्पणमस्तु।

अनुवाद कर्ता--पं० महाराजदीन दीक्षित,

प्रकाशक-हरिनारायण वर्मा बुकसेलर,

कचौड़ीगली, बनारस सिटी।

पं० जगन्नाथ शर्म्मा द्वारा—"लक्ष्मी-प्रेस" सतसागर, काशी में मुद्रित ।